संकलनकर्ता–भंभूलनाथ योगी

प्रकाशक :–

अखिल भारतवर्षीय अवधूत भेष बारह पंथ योगी महासभा

गुरु गोरक्षनाथ मन्दिर (अखाड़ा) अपर रोड, हरिद्वार–249401

फोन : 01334-226583

Webvsite : www.yogigorakshnath.org • e-mail : media@yogigorakshnath.org

श्री नवनाथ स्वरुप दर्शन
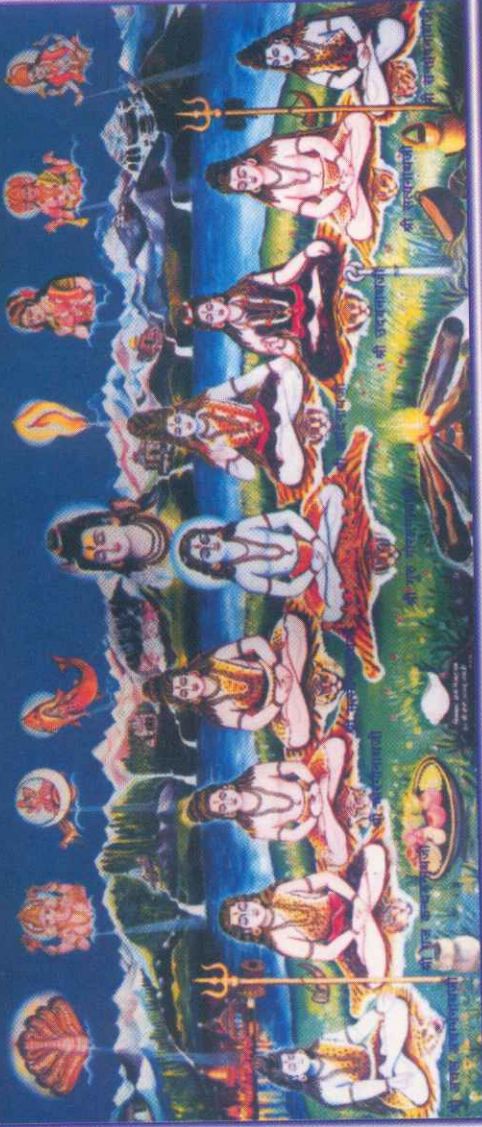
सत नमो आदेश। गुरु जी को आदेश। ॐ गुरुजी। ॐकार आदिनाथ (ॐकार) ज्योति स्वरुप बोलिये। उदयनाथ पार्वती (धरती) स्वरुप बोलिये। सत्यनाथ ब्रह्मा जी (जल) स्वरुप बोलिये। सन्तोषनाथ विष्णुजी (खड्ग खाण्डा तेज) स्वरुप बोलिये। अचल-अचम्भेनाथ शेष (वायु) स्वरुप बोलिये। गजबेलि गज कंथड़नाथ गणेश जी (गजहस्ती) स्वरुप बोलिये। ज्ञान पारखी सिद्ध चौरंगीनाथ चन्द्रमा (अठारह भार वनस्पति) स्वरुप बोलिये। माया स्वरुपी दादा मत्स्येन्द्रनाथ मत्स्य (माया) स्वरुप बोलिये। घटे पिण्डे नव निरन्तरे रक्षा करे श्री शम्भुजती गुरु गोरक्षनाथ शिव (बाल) स्वरुप बोलिये। श्री नाथजी गुरुजी को आदेश।

योगी सम्प्रदाय नित्य कर्म संचय

लेखक : **योगी भंभूलनाथ**

प्राप्ति स्थान-

अखिल भारतवर्षीय अवधूत भेष बारह पंथ योगी महासभा

गुरु गोरक्षनाथ मन्दिर अखाड़ा, अपर रोड, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

फोन : 01334-226583

Website : www.yogigorakshnath.org

e-mail : media@yogigorakshnath.org

श्री बाबा मस्तनाथ मठ, मठ अस्थल बोहर

जिला रोहतक, हरियाणा

द्वितीय संस्करण 2000] सन् 2010 [मूल्य 40.00 रुपये

।। विषय - सूची ।।

पृष्ठ संख्या

पृष्ठ संख्या

✻ ॐ सरस्वत्यै नमः ✻

प्रातः स्मरणम्

प्रातः स्मरामि परमेश्वर आदिनाथ
मत्स्येन्द्रनाथ जलधारी पदारविन्दम्।
गोरक्षनाथ गुरुदेव मुखारविन्दम्
गीर्वाण वाचमनिशं गणराज रामौ।।१।।

प्रातः स्मरामि शशिकान्त शिलातलस्थं
सिद्धासनं सकल सिद्ध समाज जुष्टम्।
उद्यद्दिनेश किरणारुण जाजजूटं
गोरक्षमक्षय मखण्ड मवेद्यमाद्यम्।।२।।

प्रातर्भजामि भुजगेश्वर यज्ञसूत्रं
तापत्रय त्रिविध पापहरं त्रिनेत्रम्।
सिद्धसुरोरग नरामर वन्द्य पादं
गोरक्ष मक्षर मनादि मनन्त मीड्यम्।।३।।

प्रातर्नमामि निगमागम गम्यमेकं
भूभूप भूसूर हिताय कृतावतारम्।
शान्तं शशाङ्क दल कोमल कान्तकायं
मायापति पतित पावन मप्रमेयम्।।४।।

✻

श्री नाथ जी की मंगल आरती

जय गोरक्ष योगी (श्री गुरुजी) हर हर गोरक्ष योगी।
वेद पुराण बखानत, ब्रह्मादिक सुरमानत, अटल भवन भोगी।
ॐ जय गोरक्ष योगी।।१।।

बाल जती ब्रह्मज्ञानी योग युक्ति पूरे (श्री गुरुजी) योग युक्ति पूरे।
सोहं शब्द निरन्तर (अनहद नाद निरन्तर) बाज रहे तूरे।
ॐ जय गोरक्ष योगी।।२।।

रत्नजड़ित मणि माणिक कुण्डल कानन में (श्री गुरुजी) कुंडल कानन में
जटा मुकुट सिर सोहत भस्मन्ती तन में।
ॐ जय गोरक्ष योगी।।३।।

आदि पुरुष अविनाशी निर्गुण गुणराशी (श्री गुरुजी) निर्गुण गुणराशी
सुमिरण से अघ छूटे सुमिरन से पाप छूटे टूटे यम फाँसी।
ॐ जय गोरक्ष योगी।।४।।

ध्यान कियो दशरथ सुत रघुकुल वंशमणि (श्री गुरुजी) रघुकुल वंशमणि
सीता शोक निवारक सीता मुक्त कराई मार्‍यो लंक धनी।
ॐ जय गोरक्ष योगी।।५।।

नन्दनन्दन जगवन्दन गिरधर वनमाली (श्री गुरुजी) गिरधर वनमाली
निश वासर गुण गावत, वंशी मधुर बजावत, संग रुक्मणि बाली।
ॐ जय गोरक्ष योगी।।६।।

धारा नगर मैनावती तुम्हरो ध्यान धरे (श्री गुरुजी) तुम्हरो ध्यान धरे
अमर किये गोपीचन्द अमर किये पूर्णमल संकट दूर करे।
ॐ जय गोरक्ष योगी।।७।।

चन्द्रावल लखरावल निजकर घात मरी (श्री गुरुजी) निजकर घात मरी
योग अमर फल देकर २ क्षण में अमर करी।

ॐ जय गोरक्ष योगी।।८।।

भूप अमित शरणागत जनकादिक ज्ञानी (श्री गुरुजी) जनकादिक ज्ञानी
मान दिलीप युधिष्ठर २ हरिश्चन्द्र से दानी।

ॐ जय गोरक्ष योगी।।९।।

वीर धीर संग ऋद्धि सिद्धि गणपति चंवर करे (श्री गुरुजी) गणपति चंवर करे
जगदम्बा जगजननी २ योगिनी ध्यान धरे।

ॐ जय गोरक्ष योगी।।१०।।

दया करी चौरंग पर कठिन विपति टारी (श्री गुरुजी) कठिन विपति टारी
दीनदयाल दयानिधि २ सेवक सुखकारी।

ॐ जय गोरक्ष योगी।।११।।

इतनी श्री नाथ जी की मंगला आरती निशदिन जो गावे (श्री गुरुजी)
प्रात समय गावे, भणत विचार परम पद (भर्तृहरि भूप अमर पद)
सो निश्चय पावे।

ॐ जय गोरक्ष योगी।।१२।।

।। ॐ शिव गोरक्ष योगी।।

श्री गोरक्ष चालीसा

दोहा– गणपति गिरिजा पुत्र को सिमरूं बारम्बार।
हाथ जोड़ विनती करूं शारद नाम अधार।।

चौपाई– जय ३ गोरक्ष अविनाशी, कृपा करो गुरुदेव प्रकाशी।
जय ३ गोरक्ष गुणज्ञानी, इच्छा रूप योगी वरदानी।।
अलख निरञ्जन तुम्हरो नामा, सदा करो भक्तन हित कामा।
नाम तुम्हारा जो कोई गावे, जन्म जन्म के दुःख नशावे।
जो कोई गोरक्ष नाम सुनावे, भूत पिशाच निकट नहीं आवे।
ज्ञान तुम्हारा योग से पावे, रूप तुम्हारा लख्या ना जावे।
निराकार तुम हो निर्वाणी, महिमा तुम्हरी वेद बखानी।
घट घट के तुम अन्तर्यामी, सिद्ध चौरासी करें प्रणामी।
भस्म अङ्ग गले नाद विराजे, जटा शीश अति सुन्दर साजे।
तुम बिन देव और नहीं दूजा, देव मुनि जन करते पूजा।
चिदानन्द सन्तन हितकारी, मङ्गल करे अमङ्गल हारी।
पूर्ण ब्रह्म सकल घट वासी, गोरक्षनाथ सकल प्रकासी।
गोरक्ष गोरक्ष जो कोई ध्यावे, ब्रह्म रूप के दर्शन पावे।
शङ्कर रूप धर डमरू बाजे, कानन कुण्डल सुन्दर साजे।
नित्यानन्द है नाम तुम्हारा, असुर मार भक्तन रखवारा।
अति विशाल है रूप तुम्हारा, सुर नर मुनि जन पावें न पारा।
दीन बन्धु दीनन हितकारी, हरो पाप हम शरण तुम्हारी।
योग युक्ति में हो प्रकाशा, सदा करो सन्तन तन वासा।
प्रातःकाल ले नाम तुम्हारा, सिद्धि बढ़े अरु योग प्रचारा।
हठ हठ हठ गोरक्ष हठीले, मार मार वैरी के कीले।
चल चल चल गोरक्ष विकराला, दुश्मन मार करो बेहाला।
जय जय जय गोरक्ष अविनासी, अपने जन की हरो चौरासी।
अचल अगम हैं गोरक्ष योगी, सिद्धि देवो हरो रस भोगी।
काटो मार्ग यम की तुम आई, तुम बिन मेरा कौन सहाई।

अजर अमर है तुम्हरी देहा, तुम अविनाशी सनकादिक सब जोरहिं नेहा।
कोटिन रवि सम तेज तुम्हारा, है प्रसिद्ध जगत उजियारा।
योगी लखें तुम्हारी माया, पार ब्रह्म से ध्यान लगाया।
ध्यान तुम्हारा जो कोई लावे, अष्ट सिद्धि नव निधि घर पावे।
शिव गोरक्ष है नाम तुम्हारा, पापी दुष्ट अधम को तारा।
अगम अगोचर निर्भय नाथा, सदा रहो सन्तन के साथा।
शङ्कर रूप अवतार तुम्हारा, गोपीचन्द भर्तृहरि को तारा।
सुन लीजो गुरु अरज हमारी, कृपा सिन्धु योगी ब्रह्मचारी।
पूर्ण आस दास की कीजे, सेवक जान ज्ञान को दीजे।
पतित पावन अधम अधारा, तिनके हेतु तुम लेत अवतारा।
अलख निरञ्जन नाम तुम्हारा, अगम पंथ जिन योग प्रचारा।
जय जय जय गोरक्ष भगवाना, सदा करो भक्तन कल्याना।
जय जय जय गोरक्ष अविनाशी, सेवा करें सिद्ध चौरासी।
जो पढ़ही गोरक्ष चालीसा, होय सिद्ध साक्षी जगदीशा।
बारह पाठ पढ़े नित्य जोई, मनोकामना पूर्ण होई।
और श्रद्धा से रोट चढ़ावे, हाथ जोड़कर ध्यान लगावे।

दोहा— सुने सुनावे प्रेमवश, पूजे अपने हाथ।
मन इच्छा सब कामना, पूरे गोरक्षनाथ।
अगम अगोचर नाथ तुम, पारब्रह्म अवतार।
कानन कुण्डल सिर जटा, अंग विभूति अपार।
सिद्ध पुरुष योगेश्वरों, दो मुझको उपदेश।
हर समय सेवा करूँ, सुबह शाम आदेश।

।। इति गोरक्ष चालीसा समाप्त:।।

श्री नाथ जी का बालाष्टक नं० १

ॐ गुरु जी प्रथम सिमरण गुरुजी को करलो हृदय में ज्ञान प्रकाशकम्
श्री आदि योग युगादि ब्रह्म सेविते सिव माधवम् श्री बाल गोरक्ष के
चरण प्रणाम्यहम्, जय श्री नाथजी के चरण प्रणाम्यहम्। जै हो जती
गोरक्ष के चरण प्रणाम्यहम्—श्री गुरु जी के चरण प्रणाम्यहम्।।१।।

ॐ गुरुजी बाल जती गुरु ब्रह्मज्ञानी घट ही में ज्योति प्रकाशकम्
उदित भानु बसन्त कमला श्री बाल गोरक्ष के चरण प्रणाम्यहम्।।२।।

ॐ गुरुजी रहित निशदिन अगम अगोचर सिद्ध ज्ञान प्रकाशिकम्
श्री जपत सुर नर देव मुनिजन श्रीबाल गोरक्ष के चरण प्रणाम्यहम्।।३।।

ॐ गुरुजी आकाश धूना पाताल मण्डल पवन सङ्गम साहेरा
श्री अमर अयोनी जी का सिमरण करलो श्री बाल गोरक्ष के चरण
प्रणाम्यहम्।।४।।

ॐ गुरुजी आदि अन्त अनादि निर्भय रहत निशदिन उन्मुना
श्री लक्ष चौरासी जीव योनियों से नाम रख दो श्री बाल गोरक्ष के चरण
प्रणाम्यहम्।।५।।

ॐ गुरु जी जल तो अम्बर थल तो सागर सोहत कंठ में मेखला
श्री कानों में कुण्डल विभूति आभरण श्री बाल गोरक्ष के चरण
प्रणाम्यहम्।।६।।

ॐ गुरुजी एक ज्योति गुरु सकल व्यापी कोटि कुंजर पराकरम्
श्री मदनमोहन जी का मान रख लो श्री बाल गोरक्ष के चरण
प्रणाम्यहम्।।७।।

ॐ गुरु जी आबू का मंडल द्वारका क्षेत्र गोरक्ष मढ़ी स्थान है श्री माधो प्रांची में श्री नाथ जी ने रुक्मिणी जी को कंगन बान्ध्यो
श्री बाल गोरक्ष के चरण प्रणाम्यहम्।।८।।

ॐ गुरु जी इतना श्री नाथ जी का बालाष्टक पढ़त निशदिन
कैलाश वासा सदा फल
श्री देवकृष्णा श्री नाथ जी की शरण आयो श्री बाल गोरक्ष के
चरण प्रणाम्यहम्।। (पूर्ववत्)

※

गोरक्षनाथाष्टक नं० २

गोरक्ष नाथ सुनाथ निर्भय निर्विकार निरंजनम्
अजर अमर अडोल निश्चल श्री गोरक्ष के चरण प्रणाम्यहम्
जय श्री नाथ जी के चरण प्रणाम्यहम् जय हो जती गोरक्ष के
चरण प्रणाम्यहम्, श्री गुरु जी के चरण प्रणाम्यहम्।१।।

ब्रह्मा शेष महेश नारद अष्ट भैरव सिद्ध यति
ध्यावते दोउ पाद पङ्कज ध्यावते सिद्ध गणपति श्री गोरक्ष के
चरण प्रणाम्यहम् पूर्ववत०।।२।।

अष्ट सिद्धि नवनिधि वन्दित ध्यावते रघुवर सिया
व्यास शुक प्रह्लाद सेवत सेविते हनुमत प्रिया श्री गोरक्ष के चरण
प्रणाम्यहम् पूर्ववत्०।।३।।

शून्य मन्दिर करत आसन योग ध्यान सदा रटन (रत)
आत्म लाभ सन्तोष पूर्ण श्री गोरक्ष के चरण प्रणाम्यहम् पूर्ववत्०।।४।।

मान नहीं अभिमान जाके कनक माटी एक समान
राग द्वैष अतीत मनसा श्री गोरक्ष के चरण प्रणाम्यहम्
पूर्ववत्० ।।५।।

अङ्ग विभूति विराजत सुन्दर लाल तिलक त्रिलोचनम्
चन्द्र सूर्य अग्नि कहिये कर्ण कुण्डल अद्‌भुतम् श्री गोरक्ष के चरण
प्रणाम्यहम् पूर्ववत्० ।।६।।

ज्ञान ध्यान अचिन्त्य मूर्ति आत्म ज्योति सदा शिवं
त्रिगुण रूप अतीत तुर्य्या श्री गोरक्ष के चरण प्रणाम्यहम् पूर्ववत्।।७।।

श्री कृष्णचन्द्र सु ध्यान कीन्हो कंस दुष्टादिक हनम्
षोडश नार सहस्त्र मुत पाइये अष्टचक्र ऊपर शोभितम् श्री गोरक्ष
के चरण प्रणाम्यहम् पूर्ववत्० ।।८।।

अक्षमाल विराजत सुन्दर चर्म चन्दन मृगं धरं
त्राटक मुद्रा ज्ञान पूर्ण कथंते सनकादिकं श्री गोरक्ष के चरण
प्रणाम्यहम् पूर्ववत्० ।।९।।

गोरक्ष अष्टक पढ़त निशदिन कैलाश वासा सदा शिवं
सर्व तीर्थ लभ्यते पुण्यं सर्व पाप विनाशनम् श्री गोरक्ष के चरण
प्रणाम्यहम् पूर्ववत्० ।।१०।।

गोरक्षनाथाष्टक नं० ३

गोरक्षनाथ योगेन्द्र जगपति आगम निगम यश गावते
शंकर शेष विरंचि शारद नारद वीणा बजावते

श्री गोरक्ष के चरण प्रणाम्यहम्, जय श्री नाथजी के चरण प्रणाम्यहम्
जय हो जती गोरक्ष के जती के चरण प्रणाम्यहम्
श्री गुरु जी के चरण प्रणाम्यहम्।।१।।

बाल रूप यतीन्द्र जटाधर ध्यावते षट्मुख जती
श्री रामचन्द्र वशिष्ठ हनुमत . ध्रुव प्रह्लाद रती पती
श्री गुरु जी के चरण प्रणाम्यहम् पूर्ववत्०।।२।।

सेली नाद सुकण्ठ साजत अनहद शब्द प्रकाशितम्
अजर अमर अडोल आसन सुर नर मुनि मन रञ्जनम्
श्री गुरु जी के चरण प्रणाम्यहम् पूर्ववत्०।।३।।

अङ्ग भस्मी असङ्ग निर्मल उन्मुन ध्यान सदा रटन
चन्द्र भानु समान लोचन कर्ण कुण्डल शोभितम्
श्री गुरु जी के चरण प्रणाम्यहम् पूर्ववत्०।।४।।

अष्ट सिद्धि नव नाथ भैरव वीर चौसठ योगनी
इन्द्र वरुण कुबेर सेवित मदन मोहन रुक्मणी
श्री गुरु जी के चरण प्रणाम्यहम् पूर्ववत्०।।५।।

उत्तर देश विचित्र गिरवर सर सरिता अगणित बहे
साधक सिद्ध सुजान तज मद मान निर्गुण ब्रह्म लहे
श्री गुरु जी के चरण प्रणाम्यहम् पूर्ववत्०।।६।।

सुर पुर नगर सुशंख रावल जाके सुत सुमिरन कियो
यम फांस त्रास निवार भव दुःख सुन्दर तन स्थिर दियो
श्री गुरु जी के चरण प्रणाम्यहम् पूर्ववत्०।।७।।

परशु धर तप कठिन कीन्हो सागर तट मठ बान्धियो
धुन्धुंकार निवारण हित मंजुनाथ जी प्रगट भयो
श्री गुरु जी के चरण प्रणाम्यहम् पूर्ववत्०।।८।।

श्रीपति नाथ सुनाथ अष्टक पढ़त विघ्न नशावहीं
वर्णत पीर चौरंगी सोई नर मनवांछित फल पावहीं
श्री गुरु जी के चरण प्रणाम्यहम् पूर्ववत्० ।।९।।

ॐ गोरक्ष गोपालं—घड़ी—घड़ी के रक्षपालं—वृद्धं न बालं जीते
यमकालं प्रातःकाल मङ्गला श्रृंगार आरती धूप ध्यान की
सिद्धो गुरुवर ! आदेश !! आदेश !!!

अथ ज्ञान गोदड़ी प्रारम्भः

सत नमो आदेश! गुरुजी को आदेश ।। ॐ गुरु जी।।

।। चौपाई।।

नाथ कहे दोअ कर जोरी, यह संशय मेटो प्रभु मोरी।
काया गोदड़ी का विस्तारा, तां से हो जीवन निस्तारा।
आदि पुरुष इच्छा उपजाई, इच्छा सखत निरंजन मांही।
इच्छा ब्रह्मा विष्णु महेशा, इच्छा शारद गौरी गणेशा।
इच्छा से उपजा संसारा—पांच तत्व गुण तीन पसारा।
अलष पुरुष जब किया विचारा, लक्ष चौरासी धागा डारा।
पांच तत्व की गोदड़ी बीनी, तीन गुणों से ठाड़ी कीनी।
तां में जीव ब्रह्म है माया, सद्गुरु ऐसा खेल बनाया।
सींवन पाँच पच्चीस सो लागे, काम क्रोध मद मोह त्यागे।
अब काया गोदड़ी का विस्तारा, देखो संतों अगम अपारा।
चन्द्र सूर्य दोउ चंदोआ लागे, गुरु प्रताप से सोवत जागे।
शब्द की सुई सुरति का डोरा, ज्ञान का टोपा निरंजन ओढ़ा।

इस गोदड़ी की कर होशयारी, दाग न लागे देख विचारी।
सुमति के साबुन सत्गुरु धोई, कुमति के मैल को डारे खोई।
जिन गुदड़ी का किया विचारा, उनको भेंटे सिरजन हारा।
धीरज धूनी ध्यान धर आसन, जतकि कोपीन सत्य सिंहासन।
युक्ति कमण्डल कर गहे लीना, प्रेम फावड़ी सतगुरु चीना।
सेली शील विवेक की माला, दया की टोपी तन धर्मशाला।
मेहर मतंगा मति व साखी, मृगछाला मन ही की राखी।
निष्ठा धोती पवन जनेऊ, अजपा जपे सो जाने भेऊ।
रहे निरन्तर सद्गुरु दाया, साधो की संगत से कुछ पाया।
लय की लकुटी हृदय की झोली, क्षमा खड़ाऊँ पहिर बहोरी।
मुक्ति मेखला सुकृत सुमरनी, प्रेम प्याला पीले मौनी।
दास कूबरी कलह निबारी, ममता कुत्ती को ललकारी।
यतन जंजीर बान्ध जो राखे, अगम अगोचर खिड़की लाखे।
वीतराग वैराग्य निधाना, तत्व तिलक दीनो निर्वाना।
गुरु गम चकमक मन सम तूला, ब्रह्म अग्नि प्रगट भई मूला।
संशय शोक सकल भ्रम जारे, पाँच पच्चीसों प्रगट मारे।
दिल के दर्पण दुविधा धोई, सो योगेश्वर पक्का होई।
सुन्न महल की फेरी देई, अमृत रस की भिक्षा लेई।
सुख दुःख मेला जग का भावे, त्रिवेणी के घाट नहावे।
तन मन खोज भया जब ज्ञाना, तब लख पावे पद निर्वाना।
अष्ट कमल दल चक्र सूझे, योगी आप आप मैं बूझे।
इड़ा पिङ्गला के घर जाई, सुषुम्ना नीर रहा ठहराई।
ॐ सोहं तत्व विचारा, बंक नाल में किया संभारा।
मनसा मार्ग गगन चढ़ जाई, मानसरोवर बैठ नहाई।

छूट गई कल्मष मिले अलेखा, इन नैनों से अलष को देखा।
अहंकार अभिमान विदारा, घट में चौका किया उजियारा।
श्रद्धा चंवर प्रीति की धूपा, निष्ठा नाम गुरु का रूपा।
अनहद नाद नाम की पूजा, ब्रह्म वैराग्य नहीं दूजा।
चित्त का चन्दन तुलसी फूला, हित का सम्पुट करले मूला।
गोदड़ी पहरी आप अलेषा, जिसने चल़ाया प्रगट भेषा।
जो गोदड़ी को पढ़े प्रभाता, जन्म जन्म का पातक जाता।
जो गोदड़ी को पढ़े मध्याना, सो नर पावे पद निर्वाना।
सन्ध्या सिमरण जो नर करे, जरा मरण भव सागर तरे।
जो गोदड़ी की निन्दा करे, षट दर्शन से वह नर टरे।
कहें मत्स्येन्द्र सुनो गोरक्षनाथ, ज्ञान गोदड़ी करें प्रकाश।

।। इति ज्ञान गोदड़ी समाप्त:।।

अथ चौरासी सिद्ध चालीसा प्रारम्भ

दोहा– श्री गुरु गणनायक सिमर, शारदा का आधार।
कहूँ सुयश श्रीनाथ का, निज मति के अनुसार।
श्री गुरु गोरक्षनाथ के, चरणों में आदेश।
जिनके योग प्रताप को, जाने सकल नरेश।

।। चौपाई।।

जय श्रीनाथ निरंजन स्वामी, घट घट के तुम अन्तर्यामी।
दीन दयालु दया के सागर, सप्तद्वीप नवखण्ड उजागर।

आदि पुरुष अद्वैत निरंजन, निर्विकल्प निर्भय दुःख भजन।
अजर अमर अविचल अविनाशी, ऋद्धि सिद्धि चरणों की दासी।
बाल यती ज्ञानी सुखकारी, श्री गुरुनाथ परम हितकारी।
रूप अनेक जगत में धारे, भगत जनों के संकट टारे।
सुमिरण चौरंगी जब कीन्हा, हुये प्रसन्न अमर पद दीन्हा।
सिद्धों के सिरताज मनावो, नव नाथों के नाथ कहावो।
जिनका नाम लिये भव जाल, आवागमन मिटे तत्काल।
आदि नाथ मत्स्येन्द्र पीर, धोरम नाथ धुन्धली वीर।
कपिल मुनि चर्पट कण्डेरी, नीम नाथ पारस चगेरी।
परशुराम जमदग्नि नन्दन, रावण मार राम रघुनन्दन।
कंसादिक असुरन दलहारी, वासुदेव अर्जुन धनुर्धारी।
अंचलेश्वर लक्ष्मण बल बीर, बलदाई हलधर यदुवीर।
सांरग नाथ पीर सरसाई, तुङ्गनाथ बद्री बलदाई।
भूतनाथ धारीपा गोरा, बटुकनाथ भैरो बल जोरा।
वामदेव गोतम गंगाई, गंगनाथ धोरी समझाई।
रतन नाथ रण जीतन हारा, यवन जीत काबुल कन्धारा।
नाग नाथ नाहर रमताई, बनखंडी सागर नन्दाई।
बंकनाथ कंथड़ सिद्ध रावल, कानीपा निरीपा चन्द्रावल।
गोपीचन्द भर्तृहरी भूप, साधे योग लखे निज रूप।
खेचर भूचर बाल गुन्दाई, धर्म नाथ कपली कनकाई।
सिद्धनाथ सोमेश्वर चण्डी, भुसकाई सुन्दर बहुदण्डी।
अजयपाल शुकदेव व्यास, नासकेतु नारद सुख रास।
सनत्कुमार भरत नहीं निद्रा, सनकादिक शारद सुर इन्द्रा।
भंवरनाथ आदि सिद्ध बाला, च्यवन नाथ माणिक मतवाला।

सिद्ध गरीब चंचल चन्दराई, नीमनाथ आगर अमराई।
त्रिपुरारी त्र्यम्बक दुःख भञ्जन, मंजुनाथ सेवक मन रंजन।
भावनाथ भरम भयहारी, उदयनाथ मंगल सुखकारी।
सिद्ध जालन्धर मूंगी पावे, जाकी गति मति लखि न जावे।
ओघड़देव कुबेर भण्डारी, सहजाई सिद्धनाथ केदारी।
कोटि अनन्त योगेश्वर राजा, छोड़े भोग योग के काजा।
योग युक्ति करके भरपूर, मोह माया से हो गये दूर।
योग युक्ति कर कुन्ती माई, पैदा किये पांचों बलदाई।
धर्म अवतार युधिष्ठिर देवा, अर्जुन भीम नकुल सहदेवा।
योग युक्ति पार्थ हिय धारा, दुर्योधन दल सहित संहारा।
योग युक्ति पञ्चाली जानी, दुःशासन से यह प्रण ठानी।
पावूं रक्त न जब लग तेरा, खुला रहे यह शीस मेरा।
योग युक्ति सीता उद्धारी, दशकन्धर से गिरा उच्चारी।
पापी तेरा वंश मिटाऊं, स्वर्ण लङ्का विध्वंस कराऊं।
श्री रामचन्द्र को यश दिलाऊं, तो मैं सीता सती कहाऊं।
योग युक्ति अनुसूया कीनों, त्रिभुवन नाथ साथ रस भीनों।
देवदत्त अवधूत निरंजन, प्रगट भये आप जग वन्दन।
योग युक्ति मैनावती कीन्ही, उत्तम गति पुत्र को दीनी।
योग युक्ति की बंछल मातू, गूंगा जाने जगत विख्यातू।
योग युक्ति मीरा ने पाई, गढ़ चित्तौड़ में फिरी दुहाई।
योग युक्ति अहिल्या जानी, तीन लोक में चली कहानी।
सावित्री सरस्वती भवानी, पार्वती शङ्कर मनमानी।
सिंह भवानी मनसा माई, भद्र काली सहजा बाई।
कामरु देश कामाक्षा योगन, दक्षिण में तुलजा रस भोगन।

उत्तर देश शारदा रानी, पूर्व में पाटन जग मानी।
पश्चिम में हिंगलाज विराजे, भैरव नाद शंखध्वनि बाजे।
नव कोटि दुर्गा महारानी, रूप अनेक वेद नहीं जानी।
काल रूप धर दैत्य संहारे, रक्त बीज रण खेत पछारे।
मैं योगन जग उत्पति करती, पालन करती संहार करती।
जती सती की रक्षा करनी, मान दुष्ट दल खप्पर भरनी।
मैं श्रीनाथ निरंजन की दासी, जिनको ध्यावे सिद्ध चौरासी।
योग युक्ति से रचे ब्रह्मण्डा, योग युक्ति थरपे नवखण्डा।
योग युक्ति तप तपें महेश, योग युक्ति धर धरे हैं शेष।
योग युक्ति विष्णु तन धारे, योग युक्ति असुरन दल मारे।
योग युक्ति गजानन जाने, आदि देव त्रिलोकी माने।
योग युक्ति करके बलवान, योग युक्ति करके बुद्धिमान।
योग युक्ति कर पावे राज, योग युक्ति कर सुधरे काज।
योग युक्ति योगीश्वर जाने, जनकादिक सनकादिक माने।
योग युक्ति मुक्ति का द्वारा, योग युक्ति बिन नहीं निस्तारा।
योग युक्ति जाके मन भावे, ताकी महिमा कही न जावे।
जो नर पढ़े सिद्ध चालीसा, आदर करें देव तेंतीसा।
साधक पाठ पढ़े नित्य जोई, मनोकामना पूर्ण होई।
धूप दीप नैवेद्य मिठाई, रोट लंगोट भोग लगाई।

दोहा– रतन अमोलक जगत में, योग युक्ति है मीत।
नर से नारायण बने, अटल योगी की रीत।
योग विहंगम पंथ को, आदि नाथ शिव कीन्ह।
शिष्य प्रशिष्य परम्परा, सब मानव को दीन्ह।

प्रातःकाल स्नान कर, सिद्ध चालीसा ज्ञान।
पढ़ें सुने नर पावही, उत्तम पद निर्वाण।

।। इति चौरासी सिद्ध चालीसा समाप्तः।।

❋

श्री गुरु गोरक्षनाथ जी की संध्या आरती

ॐ गुरुजी शिव जय जय गोरक्ष देवा श्री अवधू हर हर गोरक्ष देवा।
सुर नर मुनि जन ध्यावत सुर नर मुनि जन सेवत।
सिद्ध करैं सब सेवा श्री अवधू संत करैं सब सेवा।
शिव जय जय गोरक्ष देवा।।१।।

ॐ गुरुजी योग युगति कर जानत मानत ब्रह्म ज्ञानी।
श्री अवधू मानत सर्व ज्ञानी।
सिद्ध शिरोमणि राजत संत शिरोमणि साजत।
गोरक्ष गुण ज्ञानी श्री अवधू गोरक्ष सर्व ज्ञानी।
शिव जय जय गोरक्ष देवा।।२।।

ॐ गुरुजी ज्ञान ध्यान के धारी गुरु सब के हो हितकारी।
श्री अवधू सब के हो सुखकारी।
गो इन्द्रियों के रक्षक सर्व इन्द्रियों के पालक।
राखत सुध सारी श्री अवधू राखत सुध सारी।
शिव जय जय गोरक्ष देवा।।३।।

ॐ गुरुजी रमते श्रीराम सकल युग माही छाया है नाहीं।
श्री अवधू माया है नाहीं।
घट घट के गोरक्ष व्यापै सर्व घट श्री नाथ जी विराजत।
सो लक्ष मन मांही श्री अवधू सो लक्ष दिल मांही।
शिव जय जय गोरक्ष देवा।।४।।

ॐ गुरुजी भस्मी गुरु लसत सरजनी है अंगे।
श्री अवधू जननी है संगे।
वेद उच्चारे सो जानत योग विचारे सो मानत।
योगी गुरु बहुरंगा श्री अवधू बाले गोरक्ष सर्व संगा।
शिव जय जय गोरक्ष देवा।।५।।

ॐ गुरुजी कंठ विराजत सेली और शृंगी जत मत सुखी बेली।
श्री अवधू जत सत सुख बेली।
भगवा कंथा सोहत–गेरुवा अंचला सोहत ज्ञान रतन थैली
श्री अवधू योग युगति झोली।
शिव जय जय गोरक्ष देवा।।६।।

ॐ गुरुजी कानों में कुण्डल राजत साजत रवि चन्द्रमा।
श्री अवधू सोहत मस्तक चन्द्रमा।
बाजत शृंगी नादा–गुरु बाजत अनहद नादा–गुरु भाजत दु:ख द्वन्दा
श्री अवधू नाशत सर्व संशय
शिव जय जय गोरक्ष देवा।।७।।

ॐ गुरुजी निद्रा मारो गुरु काल संहारो–संकट के हो बैरी
श्री अवधू दुष्टन के हो बैरी
करो कृपा सन्तन पर–गुरु दया पालो भक्तन पर शरणागत तुम्हारी
शिव जय जय गोरक्ष देवा।।८।।

ॐ गुरुजी इतनी श्रीनाथ जी की सन्ध्या आरती
निश दिन जो गावे–श्री अवधू सर्व दिन रट गावे
वर्णी राजा रामचन्द्र स्वामी गुरु जपे राजा रामचन्द्र योगी
मनवांछित फल पावे श्री अवधू सुख सम्पत्ति फल पावे।
शिव जय जय गोरक्ष देवा।।९।।

❋

❋ प्रार्थना ❋

ॐ शिव हर शङ्कर गौरीशं, वन्दे गङ्गाधर मीशम्।
शिव रुद्रं पशुपति विश्वानाथ, कलहर काशीपुरी नाथम्।
भज पार लोचन परमानन्दा, नील कण्ठा त्वं शरणम्।
शिव असुर निकन्दन भव दुःख भन्जन, सेवक के प्रतिपाला।
बम बम आवागमन मिटाओ शङ्कर, भज शिव बारम्बारा।
बम शिव हर शम्भू सदा शिव सांब, हर हर सदा सदा शिव सांब।
महादेव शम्भू सभी भांति पूरे, लपेटे जटाजूट खावे धतूरे।
चढ़े शीश गङ्गा भुजँगा विराजे, गले मुण्डमाला भस्मी रमावे।
महादेव शम्भू सभी भांति पूरे, लपेटे जटाजूट डमरु बजावे।
चढ़े शीश गङ्गा भुजँगा विराजे, गले नाग माला मृगछाला बिछावें।
महादेव योगी सभी ज्ञान पूरे, लपेटे जटाजूट नादी बजावें।
चढ़े शीश गङ्गा भुजँगा बिराजे, रहे देव बाला सभी काम साजे।

किसने जो देखे बड़े गाजे बाजे, जिसने जो देखे बड़े भूप राजे।
किसने जो देखी बड़ी क्षेम करनी, किसने जो देखी सर्व जगत जननी।
किसंने जो देखा बिना पंख सूआ, किसने जो देखा बिना काल सूआ।
इन्द्र जो देखे गाजे बाजे, सतगुरु जो देखे बड़े भूप राजे।
पृथ्वी जो देखी बड़ी क्षेम करनी, माता जो देखी सर्व जगत जननी।
मनुवा जो देखा बिना पंख सूआ, निद्रा जो देखी बिना काल मूआ।

❋

।। प्रार्थना।।

ॐ शिव गोरक्ष योगी

गंगे हर—नर्मदेहर, जटाशङ्करी हर ॐ नमो पार्वती पतये हर, बोलिये श्री शम्भू जती गुरु गोरक्षनाथ महाराज की जय, माया स्वरूपी दादा मत्स्येन्द्रनाथ महाराज की जय, नवनाथ चौरासी सिद्धों की जय, भेष भगवान की जय, अटल क्षेत्र की जय, रमतेश्वर महाराज की जय, कदली काल भैरवनाथ जी की जय, पात्र देवता की जय, ज्वाला महामाई की जय, सनातन धर्म की जय, अपने—अपने गुरु महाराज की जय, गौ—ब्राह्मण की जय, बोल साचे दरबार की जय, हर हर महादेव की जय

कर्पूरगौरम् करुणावतारम्
संसारसारम् भुजगेन्द्र हारम्
सदा वसन्तम् ह्वदयार विन्दे
भवंभवानी सेहितम् नमामी
मन्दारमाला कलिनाल कायै
कपालमालाङ्कित कन्थराय
नमः शिवायै च नमः शिवाय
गोरक्ष बालम् गुरु शिष्य पालम्
शेषां हिमालम् शशिखण्ड भालम्
कालस्य कालम जिनजन्म जालम्
वन्दे जटालम जगदब्जनालम्
गुरुर्ब्रह्मा गुरुविष्णु गुरदेवो महेश्वरा
गुरुः साक्षात्परब्रह्म, तस्मै श्री गुरवै नमः

ध्यानमूलं गुरोमूर्ति, पूजा मूलं गुरु पदम
मन्त्रमूलं गुरुवाक्य मोक्ष मूलं गुरु कृपा
मन्त्र सत्यं पूजा सत्यं सत्यदेवं निरन्जनम्
गुरुवाक्य सदा सत्यं सत्यंम अेकम परंपदम्
त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव
त्वमेव विद्या द्रविडम त्वमेव
त्वमेव सर्वम मम् देव देवा:
आकाशाय ताडका लिंगम
पाताले वटुकेश्वरम्
मर्त्ये लोके महाकालम
सर्व लिंगम नमोस्तुते
शेली श्रृंगी शिर जटा झोली भगवा भेष
कानन कुण्डल भस्म लसै, शिव गोरक्ष आदेश
ॐकार तेरा आधार
तीन लोक में जय–जयकार
नाद बाजे काल भागे,
ज्ञान की टोपी, गोरख साजे
गले नाद, पुष्पन की माला
रक्षा करें, श्री शम्भुजति गुरु
गोरक्षनाथ जी बाला।।
चार खाणी चार बानी
चन्द्र सूर्य पवन पानी
एको देवा सर्वत्र सेवा
ज्योति पाटले परसो देवा

कानन कुण्डल गले नाद
करो सिद्धो नाद्कार
सिद्ध गुरोवरों को आदेश! आदेश!!

गोरक्षनाथ का बारह मास

कहता हूं कह जात हूं कहां बजाऊं ढोल।
इस इक सासां जात है त्रिलोकी का मोल।।
आषाढ़ अगम की गम राखो दम राखो साधि के।
चांद सूर्य स्वर एक लावो मूल राखो साधि के।।
श्रावण सोहं जाप जपले ॐ सोहं आप है।
नाभि नासिका बीच देखो सोई अजपा–जाप है।।
भादो भृकुटि खोज प्यारे त्रिकुटी के संग से।
प्राण पुरुष आनन्द कहिये संत रचे हरी संग से।।
आसोज करता प्यारे ब्रह्म का दीदार है।
उल्टे चश्में फेर देखो सोई वसता पार है।।
कार्तिक काया खोज प्यारे सुरति राखो अर्थ पै।
चुकी बाजी फेर खेलो जैसे नटुवा भत पै।।
मार्ग शीर्ष सेती हेत रखो सुरत राखो शून्य में।
बिना ताल मृदंग बाजे चित्त राखो धुन में।।
पोष पवना उल्ट देखो नाद की झनकार है।
तासे झीनी अवाज लखिये लखे हंसा सार है।।
माघ मन में बान्ध राखो मकड़ तार से नेहरा।
तासे झीनी ज्योत जगे है अलख सोहं सेहरा।।

फाल्गुन भगुवा खेलो गगन में अनहद बाजे वहाँ बजे।
राच रहे हंसा उस देश याही के साजे वहाँ सजे।।
चैत चेतन रूप तेरा और दूजा है नहीं।
काम क्रोध मद लोभ माया वहाँ पर है नहीं।।
बैशाख बरसे अभी जल धारा बिन बादल इक दामनी।
भीजेगा कोई योगी विरला बिन श्रवण इक तीज है।।
जेठ मरण जन्म कटै उस घर हंसा जाइयो।
कहत गोरक्ष नाथ विरला हरीयन पाइये।।

गोरक्ष संकट मोचन

बाल योगी भये रूप लिये तब, आदिनाथ लियो अवतारो।
ताहि समय सुख भयो सिद्धो का, तब शिव गोरक्ष नाम उचारो।।
भेष भगवान ने करी विनती तब, अनुपान शिला पे ज्ञान विचारो।
को नहीं जानत है जग में, शिव गोरक्षनाथ है नाम तुमारो।।१।।
सत्य युग में भये कामधेनु गऊ तब, जति गोरक्षनाथ को भयो प्रचारो।
आदिनाथ वरदान दियो तब, गौतम ऋषि से शब्द उचारो।।
त्र्यम्बक–क्षेत्र में स्थान कियो तब, गोरक्ष गुफा का नाम उचारो।
को नहिं जानत है जग में, जती गोरक्षनाथ है नाम तुमारो।।२।।
सत्यवादी भये हरिश्चन्द्र शिष्य तब, शून्य शिखर से भयो जयकारो।
गोदावरी का क्षेत्र पे प्रभु ने, हर हर गंगा शब्द उचारो।।
यति शिव गोरक्ष जाप जपे, शिवयोगी भये परम सुखारो।
को नहिं जानत है जग में, जति शिव गोरक्ष है नाम तुमारो।।३।।

आदि शक्ति से संवाद भयों जब, माया मत्स्येन्द्रनाथ भयो अवतारो।
ताहि समय प्रभु नाथ मत्स्येन्द्र, सिंहलद्वीप को जाय सुधारो।।
राज्य योग में ब्रह्म लगायो तब, नाद बिन्द को भयो प्रचारो।
को नहिं जानत है जग में यति, गोरक्षनाथ है नाम तुमारो।।४।।
आन ज्वाला जी कीन तपस्या, तब ज्वाला देवी ने शब्द उचारो।
ले जति गोरक्षनाथ को नाम तब, गोरक्षडिब्बी को नाम पुकारो।।
शिष्य भया जब मोरध्वज राजा, तब गोरक्षपुर में जाय सिधारो।
को नहीं जानत है जग में यति, गोरक्षनाथ है नाम तुमारो।।५।।
ज्ञान दियो जब नव नाथों को, त्रेता युग को भया प्रचारो।
योग लियो रामचन्द्र जी ने जब, शिव शिव गोरक्ष नाम उचारो।।
नाथ जी ने वरदान दिया तब, बद्रीनाथ जी नाम पुकारो।
को नहिं जानत है जग में यति, शिव गोरक्ष है नाम तुमारो।।६।।
गोरक्ष मढ़ी पे तपश्चर्या कीन्हीं तब, द्वापर युग को भयो प्रचारो।
कृष्ण जी को उपदेश दियो तब, ऋषि मुनि भये परम सुखारो।।
पाल भूपाल के पालनते शिव, माल हिमालय भयो उजियारो।
को नहिं जानत है जग में, यति गोरक्षनाथ है नाम तुमारो।।७।।
ऋषि मुनियों से संवाद भयो जब, युग कलियुग को भयो प्रचारो।
कार्य में सहाय किया जब जब, राजा भर्तृहरि को दुःख निवारो।।
ले योग शिष्य भया जब राजा, रानी पिङ्गला को संकट टारो।
को नहिं जानत है जग में, यति गोरक्षनाथ है नाम तुमारो।।८।।
मैनावती रानी ने स्तुति की जब, कुवां पे जाके शब्द उचारो।
राजा गोपीचन्द शिष्य भयो तब, नाथ जलन्धर के सङ्कट टारो।।
नवनाथ चौरासी सिद्धों में, भगत पूरन भयो परम सुखारो।
को नहिं जानत है जग में, यति गोरक्षनाथ है नाम तुमारो।।९।।

दोहा– नव नाथों में नाथ हैं, आदिनाथ अवतार।
जति गुरु गोरक्षनाथ जो, पूरण ब्रह्म करतार।।
संकट–मोचन नाथ का, सुमरे चित्त विचार।
जति गुरु गोरक्षनाथ जी, मेरा करो निस्तार।।

शिव गोरक्ष बावनी

शिव गोरक्ष शुभनाम को रटते शेष महेश।
सरस्वती पूजन करे वन्दन करे गणेश।।१।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को रटे जो मन दिन रात।
अवागमन को मेट के मनवांछित फल पात।।२।।
शिव गोरक्ष शुभनाम से हुए हैं सिद्ध सुजान।
नाम प्रभाव से मिट गया लोभ क्रोध अभिमान।।३।।
शिव गोरक्ष शुभनाम से हो जाओ भव पार।
कलिकाल में है बड़ा सुन्दर खेवन हार।।४।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है जिसने लिया चित्तलाय।
अष्टसिद्धि नवनिधि मिली अन्त में अमर कहाय।।५।।
शिव गोरक्ष शुभनाम में शक्ति अपरम्पार।
लेते ही मिट जात है अन्तर के अन्धकार।।६।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है रटे जो निशदिन जिव।
नश्वर यह तन छोड़ के जीव बनेगा शिव।।७।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को मन तू रटले अघाये।
काहे को चंचल भया जैसे पशु हराय।।८।।

शिव गोरक्ष शुभनाम में निशदिन कर तू वास।
अशुभ कर्म सब छूटि है सत्य का होगा भास।।९।।
शिव गोरक्ष शुभनाम में शक्ति भरी अगाध।
लेने से ही तर गये नीच कोटि के व्याध।।१०।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को जो धरे अन्तर बीच।
सबसे ऊँचा होत है भले होय वह नीच।।११।।
शिव गोरक्ष शुभनाम में करे जो नर अति प्रेम।
उसको नहीं करना पड़े पूजा व्रत जप नेम।।१२।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को रटे जो बारम्बार।
सहजहि में हो जायेंगे भव सिन्धु से पार।।१३।।
शिव गोरक्ष शुभनाम से सीख लेव अद्वैत।
मेरा तेरा छोड़ दो तजो सकल ये द्वैत।।१४।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को रटना आठों याम।
आखिर में यह आयगी मूड़ी तुमको काम।।१५।।
शिव गोरक्ष शुभनाम में शक्ति भरी अथाह।
रटने वालों को मिला भव सिन्धु का थाह।।१६।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को पहिचाना जयदेव।
यह दुस्सह संसार से तर गये वो तत खेव।।१७।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को रसना रट तू हमेश।
वृथा नहीं बकवाद कर पल–पल कहे आदेश।।१८।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को रटले तू चित्तलाय।
घोर कली से बचने का एक यही उपाय।।१९।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को मन तू रट दिन रात।
झूठ प्रपंच को त्याग दे छोड़ जगत की बात।।२०।।

शिव गोरक्ष शुभनाम को रसना कर तू याद।
काहे स्वार्थ में भूल के वृथा करत बकवाद।।२१।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को मन तू रट दिन रैन।
कबहू न खाली जान दे एक भी तेरा बैन।।२२।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को सुमिरे कोटि सन्त।
श्री नाथ कृपा से हो गया जनम मरण का अन्त।।२३।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है निर्मल पावन गंग।
रटने से रहती सदा ऋद्धि सिद्धि सब संग।।२४।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है जैसा पूनम चन्द।
रटते हैं निशदिन उन्हें राम कृष्ण गोविन्द।।२५।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है जैसा गङ्गा नीर।
रट के उतरे कोटिजन भव सागर के तीर।।२६।।
शिव गोरक्ष शुभनाम में जो जन करते आस।
निश्चय वो तो जात हैं अलष पुरुष के पास।।२७।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है जैसे सुन्दर आम।
रटने से ही हो गया अमर जगत में नाम।।२८।।
शिव गोरक्ष शुभनाम में जैसे दीप प्रकाश।
नित रटने से होत हैं अलष पुरुष का भास।।२९।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है उदधि तरन को जहाज।
रटने से हो गये हैं अमर भरथरी राज।।३०।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है जैसे सूर्य किरन।
रटले जीव तू प्रेम से चाहे जो सिन्धु तरन।।३१।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है निर्मल और विशुद्ध।
रटने से शुद्ध होत है होय जो जीव अशुद्ध।।३२।।

शिव गोरक्ष शुभनाम है अमर सुधा रस बिन्द।
पीने से हो गये हैं अजर अमर गोपीचन्द।।३३।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है रटे अनेकों राज।
जरा मरण का भय मिटा सुधरे सबके काज।।३४।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को रटा है पूरण मल।
आधि व्याधि मिट गई जनम मरण गया टल।।३५।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को रटते चतुर सुजान।
अन्तर तिमिर विनाश हो उपजत है शुद्ध ज्ञान।।३६।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है सुन्दर उज्वल भान।
रटने वालों को कभी होवे नहीं कुछ हान।।३७।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को पारस पत्थर जान।
जीव रूपी इस लोह को करते स्वर्ण समान।।३८।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को जानो सुर तरु वर।
रटने से मिल जात है जीव को इच्छित वर।।३९।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को रटते कोटिक सन्त।
नाम प्रताप से कट गया चौरासी का फन्द।।४०।।
शिव गोरक्ष शुभनाम का बहुत बड़ा है पर्व।
जिसको हैं रटते सदा सुर नर मुनि गन्धर्व।।४१।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को रटते श्री हनुमान।
भक्तों में हुए अग्रगण्य देवों में मिला मान।।४२।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को रटे जो जीव अज्ञान।
नाथ प्रताप से होत है निश्चय चतुर सुजान।।४३।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है जैसे निर्मल जल।
प्रेम लगा रटते रहो क्षण-क्षण और पल।।४४।।

शिव गोरक्ष शुभनाम है कलि तारण हार।
रटने वालों के लिये खुला है मोक्ष का द्वार।।४५।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है जैसा स्वच्छ आकाश।
रटने वालों को बना लेते है निज दास।।४६।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है अग्नि आपो आप।
रटने वालों के सभी जल जाते हैं पाप।।४७।।
शिव गोरक्ष शुभनाम है अमर सुधा रस बिन्दु।
पीने से तर जात हैं सहज ही में भव सिन्धु।।४८।।
शिव गोरक्ष शुभनाम की महिमा अपरम्पार।
कृपा सिन्धु की विन्दु हो करदे भव से पार।।४९।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को बन्दन करूँ हजार।
कृपा करो त्रिलोक पर करदो भव से पार।।५०।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को प्रेम सहित आदेश।
ऐसी कृपा करो प्रभु रहे नहीं कुछ शेष।।५१।।
शिव गोरक्ष शुभनाम को कोटि करूँ आदेश।
करके कृपा मिटाईए जन्म मरण का क्लेश।।५२।।

।। गोरक्षशब्दनिरुक्तिः।।

अकारि लोकत्रितयी त्रयीमयीमधारि योगाग्निमयी तनुस्तनुम्।
अहारि दौस्थ्यं जगतां यया शुभं, व्यभारि गोरक्ष इति स्तुतां स्तुमः।।१।।

आदरणीय श्री नाथ भक्तों! तथा प्रिय जनते!! गोरक्षनाथ को कौन नहीं जानता है? कौन ऐसा वैदिक शास्त्र है जिसमें गोरक्ष शब्द को

स्थान न दिया हो, कौन ऐसा ऐतिहासिक पुरुष है जिसने इसकी समालोचना न की हो—कौन ऐसा युग है जिसके प्रभाव से वंचित रहा हो, प्रथम गोरक्ष शब्द का विचार आवश्यक है, विचार के लिए व्याकरण, उपमानकोष, आप्तवचन, व्यवहार, इनको मानना होगा, व्याकरण से—गां रक्षतीति गोरक्षः, रक्षतिति रक्षः, गवां रक्ष गोरक्षः, यावद्—गोपदवाच्य की जो रक्षा करता हो उसे गोरक्ष कहते हैं। अर्थात् जितने भी गो शब्द के अर्थ हैं उन अर्थों की रक्षा करने वाले का नाम गोरक्ष है। उपमान से—उपमिति के कारण को उपमान कहते हैं। उपमान उपमिति का असाधारण कारण है। संज्ञा संज्ञी सम्बन्धी ज्ञान इसका भावार्थ हुआ गोरक्ष शब्द संज्ञा उसका वाच्य संज्ञी अर्थ हुआ, गोरक्ष शब्द की चाक्षुष विषयता उस वाच्य की उपस्थिति करेगी। कोष से—स्वर्गेषुपशुवागवज्रदिङ् नेत्रघृणिभूजले। गौंर्नादित्ये वलीवर्दे किरणक्रतुभेदयोरित्यमरः। स्त्री तू स्यादिृशि, भारत्यां, भूमौ च सुरभावपि। नृस्त्रियोः स्वर्गवज्राम्बुरश्मिदृग्बाणलोमसु, इति केशवः। 'गौः स्वर्गे च वलीवर्द रश्मौ च कुलिशे पुमान्' इति केशवः। स्त्री सौरभयी दृग्बाणदिग्वाग्भूष्वप्सु भूम्नि च, इति मेदिनी। स्वर्ग, बाण, पशु, वाणी, वज्र, दिशा, नेत्र, किरण, पृथ्वी, जल, सूर्य, बैल, यज्ञ, सुरभि आदि ये गो शब्द के वाच्य हैं। इन उपर्युक्त पदार्थों की रक्षाकर्त्ता का नाम गोरक्ष है। आप्त वचन—आप्तस्तु यथार्थवक्ता सत्यवक्ता का नाम आप्त वचनों का नाम आप्तवचन है। एहलौकिक पारलौकिक भेद से आप्तवाक्य दो प्रकार से प्रसिद्ध हैं। दर्शन पुराण इतिहासादि ऐहलौकिक, आप्त वचन हैं, वेद का मन्त्र भाग, ब्राह्मणादि वचन पारलौकिक हैं, प्रमाण प्रमेयादि दोषों के कारण मानवीय ज्ञान निर्भ्रान्त नहीं भी हो, परन्तु ईश्वरीय आर्ष

यौगिक ज्ञान निर्भ्रान्त ही है। आर्षे—संज्ञायां च ६। २ । ७७ । अण्णन्ते परे तन्तुवायो नाम कृमि:। अकृञ इत्येव रथकारो नाम ब्राह्मण:। गोतन्त्यियं पाले । ६। २। ७८। गोपाल:। तन्तिपाल: अनियुक्तार्थो योग:। पाल इति किम्? गोरक्ष:। स्कोरिति कलोप:। गोरट्। गोरड्। गोरक्षौ गोरक्ष:। तक्षिरक्षिभ्यांण्यन्ताभ्यां क्विपि तु स्कोरिति न प्रवर्तते णिलोपस्य स्थानिवद्भावात्। पूर्वत्रासिद्धीये न स्थानिवदिति तु, इह नास्ति। तस्य दोष: संयोगादिलोपलत्वणत्वेष्विति निषेधात्। तस्मात्संयोगान्तलोप एव। गोरक्। गोरग्। गोरक्षौ। गोरक्ष:। स्कोरिति कलोपंप्रति कुत्वस्यासिद्ध त्वात्संयोगान्तलोप एव।। यह शब्द संज्ञा में सस्वरसिद्ध होगा। किन्तु कृञ् धातु को छोड़कर होगा। रथकारो ब्राह्मण:। यहां पर कृञ् का ही प्रयोग है। गोपाल तन्तिपाल शब्दों को स्वर होगा गो शब्द से उत्तर पाल होना आवश्यक है। पाल ऐसा क्यों कहा? गो शब्द से रक्षपरे रहते—यह स्वर नहीं होगा, जैसे—गोरक्ष यहां गो शब्द रक्ष परत्व है। तक्षि रक्षि धातुओं से ण्यन्त से क्विप् करने पर भी यह गोरक्ष शब्द सिद्ध हो सकता है। स्को:सूत्र की प्राप्ति नहीं होगी, णिलोप को स्थानिवद् भाव मानना होगा। पूवत्रासिद्धीय स्थानिवद् भाव का बाधक नहीं होगा। यह निषेध संयोगादि लोपलत्वणत्व में ही प्रवर्तित होता है अत: संयोगान्त लोप मानना उचित है। स्को सूत्र: के कलोप के प्रति कुत्व असिद्ध है। वेदमन्त्रभाग से—आयं गौ: पृश्निरक्रमी दसदन् मातरम्पुर:। पितरञ्च प्रयन्त्स्व:। य० अ०३। मं०६। गोत्रभिदं गोत्रभिदं वज्रबाहुं जयन्तमज्म प्रमृणन्तमोजसा। इम् ँ स जाता अनुवीरयध्वमिंद्रसखायो अनूस ँ रभध्वम्। यजु:—अ०१७। मं० ३८ गोभिर्न सोममश्विना मा सरेण परिस्रता। समधात सरस्वत्या स्वाहेन्द्रो सुतं

मधु।। यजुः—अ० २०। मं० ६६। वेद ब्राह्मण भाग से—

इन्द्रस्त्वं प्राणतेजसा रुद्रोऽसि परिक्षिता।

त्वमन्तरिक्षे चरसि सूर्यस्त्वं ज्योतिषां पतिः। अ० २। म० ९।

प्राणस्येदं वशे सर्वं त्रिदिवे यत्प्रतिष्ठितम्।

मातेव पुत्रान् रक्षस्व श्रीश्च प्रज्ञां च विधेहि नः। अ० २। १०।

इत्यादि मन्त्रों में और रक्ष का वही अर्थ है जो गोरक्ष का सर्वत्र प्रसिद्ध है।

अथर्ववेद से—अध्यक्षो वाजी मम काम उग्र कृणोतु मह्यामसपत्नमेव। विश्वे देवा मम नाथं भवन्तु हवमायन्तु म इमम्। ऊर्जो भागो निहितो यः पुरा व ऋषिप्रशिष्टाय आभरैताः। अयं यज्ञो गातुविन्नाथवित्प्रजाविदुग्रः पशुविद्वरविद्वो अस्तु।। इत्यादि वेदमन्त्रों में नाथ शब्द का वही अर्थ है जो पाणिनि मुनि ने नाथृ नाधृ याञ्चोपतापैश्वर्याशीःषु, इस धातुपाठ से व्यक्त किया है, याचक उपतापक दण्डदाता, ऐश्वर्यसम्पन्न, आशीर्वाददाता, ये चार अर्थ नाथ शब्द के होते हैं। ब्रह्माण्ड पुराण ललितापुर वर्णन में—

तस्य चोत्तरकोणे तु वायुलोको महाद्युतिः।

तत्र वायुशरीरराश्च सदानन्दमहोदयाः।।१।।

सिद्धा दिव्यैयश्चैव, पवनाभ्यासिनोऽपरे।

गोरक्षप्रमुखाश्चान्ये, योगिनी योगतत्पराः।।२।।

उसके उत्तर कोण में महाद्युति वायुलोक है। उस वायुलोक में गोरक्षनाथ हैं प्रधान जिन्हों में, ऐसे पवनाभ्यासी आनन्द निमग्न सिद्ध योगिराज निवास करते हैं तथा दिव्य महर्षिगण भी रहते हैं। इससे स्पष्ट है वायुलोक में भगवान् गोरक्षनाथ अब भी विद्यमान हैं। ब्रह्माण्ड पुराण

यहग्रीव संवाद ललितापुर वर्णन से यह आख्यान उद्घृत किया है—

स्कन्द पुराणान्ततर्ग केदारखण्ड ४२ अध्याय में भगवान् आदिनाथ शिव जगदम्बिका के पूछने पर स्वयं गोरक्षनाथ के आश्रम का निर्देश करते हैं—

तस्माद् दक्षिणतो देवि! गोरक्षाश्रमरक्षक:।
यत्र सिद्धो महादेवि! गोरक्षो वसतेऽनिशम्।।१।।

तल्लिङ्गन्तु प्रवक्ष्यामि, शृणु पुण्यतमं स्थलम्।
महातप्तजलं तत्र वर्तते, सर्वदैव हि।।२।।

तत्र स्थित्वा सप्तरात्रं जपन् वै शिवमुत्तमम्।
सिद्धो भवति देवेशि! यथा गोरक्ष उत्तम:।।३।।

आदिनाथ बोले हे देवि! उससे दक्षिण की ओर अत्यन्त रमणीय एवं पवित्र गोरक्षाश्रम है। जहां पर सिद्धाधिराज गोरक्षनाथ निवास करता है। उस महापीठ का चिन्ह बताता हूं—यह अत्यन्त पुण्यतम है सर्वदा जहां अत्यन्त उष्ण जल विद्यमान है। जो पुरुष सात रात शिव का जप करता हुआ निवास करे वह साक्षात् गोरक्षनाथ जैसा हो जाता है। उससे आगे—स्कन्द पुराण के० ख० अ० ४५ पृ० ४६ तथा अ० ४६ पृ० ४७ में ऐसा लिखा है, जिसका संक्षेप दिया जाता है—

नित्यनाथादय: सिद्धा, अत्रैव जपतत्परा:।
सिद्धिम्प्राप्ता: पुरा देवि! मादृशास्ते न संशय:।।१।।

न तस्य भयलेशोऽस्ति, तिष्ठतस्तत्र पीठके।
शीघ्रं वै लभते सिद्धि: यथा गोरक्षकादय:।।२।।

हे देवि! पहिले नित्यनाथ (मत्स्येन्द्रनाथ) तथा गोरक्षनाथ साधकों को वाञ्छित फल देने में समर्थ हुए एवं मेरे जैसे बने तथा जप परायण इस पीठ पर रहने वाला पुरुष भी पूर्ण सिद्धियों को प्राप्त कर सकता है इसमें सन्देह नहीं तथा शिवपुराण ख० ७ सप्तम अ० १ में ब्रह्मा जी ने शिव के अवतारों की वर्णन संख्या में भगवान् गोरक्षनाथ को शिवावतार बतलाया है–

शिवो गोरक्षरूपेण, योगशास्त्रं जुगोप ह।
यमाद्यङ्गै र्यथास्थाने, स्थापिता योगिनोऽपि च।।१।।

भगवान शिव गोरक्ष रूप में आकर योग और योगियों की रक्षा की तथा योगशास्त्र की सत्यता को यम नियम आदि अङ्गों द्वारा प्रमाणित किया। महाकाल योगशास्त्र कल्पद्रुम में–देवताओं के पूछने पर गोरक्षनाथ कौन हैं? इस बात का उत्तर स्वयं महेश्वर कहते हैं–

अहमेवास्मि गोरक्षो, मद्रूपं तन्निबोधत।
योगमार्गप्रचाराय मया रुपमिदं धृतम्।।

हे देवताओं मैं ही गोरक्षनाथ हूं मेरे से पृथक् नहीं, प्राणियों को मृत्यु के मुख में जाते हुए देख मैंने योगमार्ग के प्रचारार्थ इस रूप को धारण किया है।

एक बार जब इन्द्र द्वारा बृहस्पति का अपमान हुआ–गुरुदेव स्वर्ग छोड़ चले गये, इन्द्र भी ब्रह्महत्या से ग्रसित हुए–इन्द्राणी ने असहाय होकर बृहस्पति को पतिव्रत रक्षार्थ बुलाया, बृहस्पति ने भी भगवान् गोरक्षनाथ के पास जाकर इन्द्राणी के दु:खावस्था का निवेदन कर, उसका उपाय पूछा, जिसका वर्णन विशद रूप से–गोरक्षगीता में भी प्राप्त है–

वैशम्पायनमासीनमुवाच जनमेजयः।

गीतां गोरक्षनाथस्य, कथयस्व महामुने!।।

सुराचार्य! शृणु त्वं च तामसंभावसंश्रितम्।

ज्ञानहीनं बृहच्छोकंभेदयुक्तं तुशङ्कितम्।।

गो० पी० पटल १ श्लो० ३ पटल० द्वि० श्लो० ५८ में सुराचार्य के शोक का कारण पूछ कर, आगे उसका उपाय श्रीनाथ ने बताकर बृहस्पति के शोक को हटाया, इसी कथानक को वैशम्पायन के मुख से जनमेजय ने भी सुना। हठयोग वर्णन प्रकरण में मार्कण्डेय पुराण में श्री गोरक्ष का वर्णन है–

द्विधा हठः स्यादेकस्तु मत्स्येन्द्रादिसुयोगिभिः।

अन्यो मृकण्डुपुत्राद्यैः साधितो हठसंज्ञकः।।१।।

हठयोग दो विभागों से विभक्त है, एक विभाग की केन्द्र शक्ति भगवान् मत्स्येन्द्र एवं गोरक्ष दूसरे की चिरायु मार्कण्डेय आदिपद से सिद्धार्थ बुद्धनाथादि।

इसी प्रकार स्कन्द पुराण के केदारखण्ड अ० ७४ पृ० ८२ में नवनाथों का वर्णन मिलता है–

नव नाथाः समाख्यातास्तत्र, श्री आदिनायकः।

अनादिनाथः कूर्माख्यो भवनाथस्तथैव च।।१।।

सत्यसन्तोषनाथौ तु मत्स्येद्रो गोपीनाथकः।

गोरक्षो नव नाथास्ते, नादब्रह्मरताः सदा।।२।।

गोरक्षो नवनाथास्ते इस पद में श्री गोरक्ष का नवनाथों में संकलन किया है, नादब्रह्मरताः पद से शब्द ब्रह्मवाद के भी मूल कारण श्रीनाथ हैं। प्राणतोषिणी ग्रन्थ में विमलानन्दनाथनाम से श्रीनाथ को कहा है–

परमानन्दनाथश्च प्रकाशानन्दनाथकः।
कुलेश्वरानन्दनाथः कोलेशानन्दनाथकः॥१॥
भुजगानन्दनाथश्च सहजानन्दनाथकः।
गाङ्गतानन्दनाथश्च श्री लोकानन्दनाथकः॥२॥
विमलानन्दनाथश्च नव नाथा प्रकीर्तिताः॥३॥

शाक्त प्रमोद के ४४वें अध्याय के दिव्यौघप्रकरण में श्रीनाथ का त्रर्णन मिलता है—

मीनो गोरक्षकश्चैव, भोजदेवः प्रजापतिः।
मूलदेवो रन्तिदेवी विघ्नेश्वरहुताशनौ।१॥
समयानन्दसन्तोषकालिकागुरवस्तथा।
आनन्दनाथशब्दान्ते गुरवः सर्वसिद्धिदाः॥२॥

मीनानाथ का सम्प्रदाय क्रम से प्रयोग को प्रदर्शित किया है। स्कन्द ुराण हिमवत्खण्ड नेपाल माहात्म्य विरूपाक्षतीर्थ यात्रा प्रकरण सेद्धाचलस्थमृगस्थली माहात्म्य में भगवान् गोरक्ष को अनेक सिद्धि प्रदाता कहा है—

ब्रह्मदीपे महातीर्थे स्नात्वा दीपः प्रदीयते।
कार्तिकस्य चतुर्दश्यां शुक्लायां वा विशेषतः॥५२॥
ोरक्षनाथो योगीन्द्रो योगेनात्र समाश्रितः।
त्स्येन्द्रेण समं नित्यं चौरङ्ग्याद्यैश्च योगिभिः॥५३॥
तेषां योगश्च संसिद्धस्तत्र मृगस्थले द्विज।
पशुपतेः प्रसादत्ती योग प्रापुरथार्हणम्॥५४॥
ानासिद्धगणर्नित्यमत्रागत्य सुभक्तितः।
त्रब्धस्तैर्महायोगो, गोरक्षस्य प्रसादतः॥५५॥

कार्तिकस्य चतुर्दश्यां कृष्णायां दृश्यते बुध:।

सिद्धाश्रमे पादुकास्य निष्पापास्ते न संशय:।।५६।।

त्रिरात्रं वसते तत्र तं गोरक्षं स्मरन् धिया।

योगीश्वरो भवेदाशु सिद्ध देहो भवेत्सदा।।५७।।

अव एव गरिष्ठं च ह्येयेतत् क्षेत्रं विरुपद्धक्।

सिद्धानमाश्रमं शश्वत् पशुपतेर्विहारकम्।।५८।।

मृगस्थलीगिरिं भ्राम्य, ब्रीहीन् विक्षेपयेत्कृतम्।

सुवर्णरतिकातुल्यं ब्रीहिमेकं च यत्फलम्।।५९।।

सिद्धाचलस्य मृगस्थली स्थलनिवासि अनेक सिद्धगण गोरक्ष नाथ के प्रसाद से कृतार्थ होकर सदा के लिए संसार में आदर्श हुए।

भगवान् पशुपति की यह स्थली विहार स्थली है परम पवित्र सर्वश्रेष्ठ है, सिद्धाचल मृगस्थली के चारों ओर बाला–चतुर्दशी में जो पुरुष भ्रमण करता हुआ ब्रीहियों को विकीर्ण करता है, वह एक–एक प्रति ब्रीहि सुवर्ण रत्ति को पुण्य प्राप्त करता है।

अन्यत्र भी–

गोरक्षनाथस्य तप: प्रभावादाकृष्टचेता: किल चक्रवर्ती।

सहस्रबाहुर्वसुधाधिपोऽयं जगाम गोरक्षगुरुं शरण्यम्।।

योगस्य जिज्ञास्यतमं विदित्वा मार्ग महेशस्य गुरो: सकाशात्।

जग्राह सोमान्वयचक्रवर्ती, गोरक्षनाथस्य बभूव शिष्या। इत्यादि।

सोमवंशावतंस, समस्त वसुधातल चक्रवर्ती महाराजाधिराज सहस्रबाहु भगवान् गोरक्षनाथ के तप: प्रभाव से आकृष्ट होकर उनके पास गये और उस जिज्ञास्य अभिप्रेत योगमार्ग को ग्रहण किया जो कि आदिनाथपरम्परा

से चला आया। अन्त में वे श्री गोरक्षनाथ के शिष्य हो गये एवं अजेय योगशक्ति को प्राप्त किया।

इति शा. म. र. फलेग्रहिसंकिलता गोरक्षशब्दनिरुक्तिः।

शिव गोरक्ष जाप

(सती पीर कायानाथ कथित)

शिव गोरक्ष गुण गाइये, नित उठ मनुज प्रभात।
गुरां देवी पूजिये, ऋद्धि सिद्ध की मात।।१।।

शिव गोरक्ष के सिम–यां, सब दुख होवन दूर।
दूध पूत घर लक्ष्मी, सदा रहे भरपूर।।२।।

नाथ सहाई आखिरी, होंवे आपै आप।
कष्ट कलेश मिटाय दे, और मिटावें पाप।।३।।

शिव गोरक्ष के नाम से, पापी तरें अनेक।
मैं प्राणी भी तां तरूँ, जे शिव गोरक्ष टेक।।४।।

शिव गोरक्ष का रंग, हर में रह्यो समाय।
पांच तत्त का रंग, आपे ही वण जाय।।५।।

शिव गोरक्ष को ध्याइये, सब दुःख होवन नाश।
शिव गोरक्ष विन वन्धा! किस कम तेरा श्वास।।६।।

नाथ मिटादे जीवन–मरण, मैं प्राणी नाथ की शरण।
मैं सेवक गोरक्ष का दास, हरदम रहे नाथ की आस।।७।।

शिव गोरक्ष विन वन्द्या! सूना है संसार।
शिव गोरक्ष हिय सिमरिये, बेड़ा होवे पार।।८।।

महिमा शिव गोरक्षनाथ की, मुझसे कथी न जाय।
वेद पुराण पुकारते, कीर्ति रहे बद्याय।।९।।

शिव गोरक्ष हृदय धरो, जे चाहो सुख चैन।
शिव गोरक्ष के नाम में, मगन रहो दिन रैन।।१०।।

शिव गोरक्ष के चरण में, नित उठ धरो ध्यान।
शिव गोरक्ष ही वन्द्या! सदा करें कल्याण।।११।।

शिव गोरक्ष सम और ना, हिरदय सोच–विचार।
वेद पुराण पुकारते, शिव गोरक्ष नाम चतार।।१२।।

शिव गोरक्ष के भजन से, पाप न लागे अंग।
सुख सम्पत्ति सदा रहे, चढ़त सवाया रंग।।१३।।

शिव गोरक्ष के नाम से, अंधकार मिट जाय।
शिव गोरक्ष को ध्याइये, मनवाँछित फल पाय।।१४।।

शिव गोरक्ष के भजन विन, पाँचों होवे ख्वार।
काम क्रोध लोभ मोह, होर अहंकार।।१५।।

सभी देवी देवते, गोरक्ष की तस्वीर।
भेद–भाव त्याग कर, कञ्चन करो शरीर।।१६।।

भक्तों के दुःख हरण को, आवे नाथ तत्सार।
जो नर उनको सेवते, धन–धन हैं लख बार।।१७।।

क्या राजा क्या बादशाह, क्या वजीर क्या फकीर
हर का नाम चतारते, क्या गरीब क्या अमीर।।१८।।

इस जग में कोटां कोट हैं, नाना रूप के नाम।
कोई शिव कृष्ण पुकारता, कोई पुकारे राम।।१९।।

कोई ब्रह्मा विस्न को, नित उठ जोड़े हाथ।
कोई भवानी शारदा, सर्व जगत की मात।।२०।।

सेवक का यह धर्म है, नित उठ करे स्नान।
हाथ जोड़ शिर नाय के, हृदय धरे ध्यान।।२१।।

सनातन धर्म में रहें हिन्दू, शिव गोरक्ष का दास।
इयो संझिये नाथजी, हरदम मेरे पास।।२२।।

सेवा सन्त गौ ब्रह्म की, हिन्दू की कुल रीत।
दया धर्म मन में रहे, करे नाथ संग प्रीत।।२३।।

काया का यह धर्म है, करना सत उपकार।
बिना सत उपकार के! नहीं तेरा अधार।।२४।।

शिव गोरक्ष को ना भजे, सो मूरख मतिमन्द।
शिव गोरक्ष के सिम–यां, सदा रहे आनन्द।।२५।।

शिव गोरक्ष के नाम को, जो कोई जपत हमेश।
रोग न लागे अंग में, मिटे पाप क्लेश।।२६।।

गीता गंगा गायत्री, गोरक्षबोध पुराण।
शिव गोरक्ष का रंग, निश्चय करके जाण।।२७।।

निराकार निर्भय शिव, इक सौ अठ अवतार।
पूरण ब्रह्म परमात्मा, जिसका सकल पसार।।२८।।

महिमा गोरक्ष नाम की, पढ़े जो प्रात:काल।
सती पीर कायानाथजी, उस पर सदा दयाल।।२९।।

अटल शिव गोरक्षनाथ हैं, और नाम सब नास।
जड़ चेतन जिया जनको, करे काल नित ग्रास।।३०।।

ऐ! प्राणी! तू छोड़ दे, और सभी की आस।
जति गुरु गोरक्षनाथ का, सबके घट में वास।।३१।।

बोलो! हर! श्रीनाथ! हर! श्रीनाथ! हर! श्रीनाथ!

इति श्री शिव गोरक्षनाथ जाप सिद्ध काया नाथकृत सम्पूरण।।

❋

"ॐ शिव गोरक्ष योगी"

।। गोरखनाथ–अवतार कथा ।।

नारदपुराण तथा स्कन्दपुराण से प्रमाणित है, किसी ब्राह्मण ने ज्योर्तिवित् के आदेश से गण्डान्तनक्षत्र में उत्पन्न निज पुत्र को अनिष्ट जानकर उसका समुद्र में परित्याग किया। वह बालक अतुल महिमशाली परमेश्वर की गतिविधि से किसी महामत्स्य का भोजन बना।

वह द्विजपुत्र दयामय की अघटित घटना अचिन्त्य रचना–चातुरी चमत्कार से काल के पाश में नवेष्टित हो जीवित ही रहा। एक बार श्री पार्वती अमरकथा विषयक प्रगाढ़ प्रार्थना के वशीभूत हो भूतनाथ भगवान महेश्वर कैलाश शैल को त्याग कर पार्वती को अमरकथा सुनाने के लिए महा पर्वत लोकालोक पर पहुंचे। वह महाशैल मणियों में भूषित था। अतएव उसकी शोभा अनूठी थी।

जिस प्रकार महावायु मेघमण्डल को दिगन्तरों में अपने वेग से प्रस्थानित करता है, वैसे ही अमर कथा सुनाने को एकान्त स्थान चाहने वाले श्री मूलनाथ ने तीन ताल द्वारा सकल पशु पक्षि वर्ग को उस स्थान से हटाया।

सर्वपूज्य भगवान् मणिरत्नों से शोभायमान लोकालोक से इस प्रकार प्राणियों को प्रशान्त कर श्री महादेवी को अमर कथा सुनाने को अवहित हो गये। परमकारुणिक भक्तवत्सल श्री आदिनाथ आशुतोष ने भवानी सपर्या से संतुष्ट हो मृत्यु को जीतने में समर्थ उस अमर कथा का उपदेश किया। श्री गौरी ने भी भगवान् को प्रणाम किया। बहुत काल कथा सुनते बीता, श्री पार्वती योगनिद्रा में अवस्थित हो गई।

इसी अवसर पर तेजोभार से प्रपीड़ित वही महामत्स्य जिसने अग्रजन्मा सुत को ग्रसित किया, उसी सागर तट पर आ पहुंचा एवं कथा हुंकृति को प्रगट किया, आदिदेव कथा सुनाते ही रहे।

भगवान् आदिनाथ ने द्विजशिशु पर अनुग्रह किया, जिससे कोई कष्ट न पाकर सुख से निकलकर भगवान के निकट आ विराजा और चरणों में प्रणाम किया। भगवान् महेश्वर पूछने लगे हे वत्स! महामत्स्य के उदर में तुम्हारा निवास किस असाधारण कारण हुआ, सत्य कहो। बालक बोला हे सर्वज्ञ! हे सर्वशक्तिमान्!! हे दयामय!!! आप स्वयं जानते हैं मैं क्या कहूं। इस प्रकार बालभाषित माधुर्य से निरतिशय संतुष्ट हो एवं प्रसन्न होकर आदिशक्ति जगदम्बा से भगवान मूलनाथ इस प्रकार बोले। हे शैलराजपुत्रि! यह बालक आपका पुत्र है, यह दिनमणि के सदृय संसार का प्रधान नेता होगा एवं सर्वदा प्रसन्नचित्त रहेगा, इसको पराजित करने वाला कोई नहीं होगा। भगवान् आदिनाथ द्विजपुत्र को आशीर्वाद देकर बोले हे वत्स! तुम मत्स्य के उदर सन्निधान से प्रगट हुये हो अतः तुम्हारा नाम संसार में मत्स्यनाथ या मत्स्येन्द्रनाथ होगा,

क्योंकि तुम मत्स्यावतार मत्स्यों के इन्द्र हो। अब जाओ समस्त लोकों में भ्रमण करो। योग विद्या का विस्तार करो, यही हम दोनों का आदेश है।

मत्स्येन्द्रनाथ बोले हे नटराज! करुणामय!! यह सर्व आपका ही अनुपमानुग्रह है, मैं कृतकृत्य हूं। महाप्रकाश मत्स्येन्द्रनाथ ने भगवान् एवं भगवती से आदेश प्राप्त कर योग विद्या बुद्धि के लिये वहां से प्रयाण किया, योग प्रचार की इच्छा से प्रथम अखिल भुवनों का भ्रमण किया। कुछ काल तक योग विद्या के प्रचार करने के अनन्तर लोकनाथ महाप्रकाश सिद्धनाथ जी के मन में भगवान् आदिनाथ की तपश्चर्या करने का विचार प्रकट हुआ, भगवान् के सात्विक ध्यान में स्थित हो गए एवं मनोरूपी कुसुमों से आदिनाथ परमेश्वर की आराधना करने लगे। लोकनाथ मत्स्येन्द्रनाथ जी के चिरकाल पवित्र तप से भगवान् अत्यन्त प्रसन्न हो गए एवं प्रकट होकर बोले हे नित्यनाथ! मैं तुम्हारे तप से निरतिशय प्रसन्न हूं, स्वेच्छानुकूल वर मांगों। सिद्धनाथ बोले हे प्रभो! यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं वर देना चाहते हैं तो मैं इसी को उत्तम समझता हूं और याचना करता हूं कि आप मेरे सहायक होकर अवतार को धारण करें। मैं स्वयं आकर तुम्हारी सहायता करूंगा, तब तक योगविद्या विकास करो। ऐसा कहकर श्री महादेव कैलाश अद्रि को चले गये, करुणामय उस समय आर्य्यावलोकितेश्वर महाप्रकाश सिद्धनाथ के योग प्रचार से यह योगविद्या, राजयोग, लययोग, हठयोग, मन्त्रयोग, ध्यान योग, विज्ञानयोग, प्रभृति विभिन्न नामों से प्रसिद्ध हुई। कुछ समय के चले जाने पर अमिताभ करुणामय के वर का स्मरण भगवान् मूलनाथ ने किया, उसी समय भगवान् ने श्री महादेवी के पूर्वव्रत्त से प्रेरित होकर

हृदय को उसी दिशा में परिणत किया। उमा का अन्तस्थल अहङ्कार सागर में वीचि लेने लगा, अभिमान की मात्रा से आच्छादित अचिन्त्य शक्ति के आवेश में आकर श्री पार्वती भगवान् महेश्वर से बोली—हे आदिदेव आदिनाथ! जहाँ—जहाँ आप हैं वहाँ—वहाँ मैं आपसे पृथक् नहीं, मेरे बिना आपकी कोई सत्ता नहीं, मद्विशिष्ठ ही आप हैं। हे महादेव आदिनाथ! आप विष्णु हैं तो मैं लक्ष्मी हूं, आप महेश्वर हैं तो मैं महेश्वरी हूं, आप शिव हैं तो मैं शक्ति हूं, आप ब्रह्मा हैं तो मैं सावित्री, आप इन्द्र हैं तो मैं इन्द्राणी, आप वरुण हैं तो मैं बरुणानी, आप पुरुष तो मैं प्रकृति, आप ब्रह्म हैं तो मैं माया, मेरे से पृथक् आप नहीं हैं। जगदम्बा के वचनों का स्मरण कर मूलनाथ बोले है महेश्वरी! जहाँ—जहाँ तुम हो वहाँ—वहाँ मैं अवश्य हूं, यह कथन सत्य है, और जहाँ—जहाँ मैं हूं वहाँ—वहाँ आप विराजमान हैं, यह कथन सत्य नहीं, क्योंकि जहाँ—जहाँ घट है, वहाँ—वहाँ मृत्तिका अवश्य है, किन्तु जहाँ मृत्तिका है, वहाँ घट नहीं आकाश सर्व पदार्थों में व्यापक है, सर्व पदार्थ आकाश में व्यापक नहीं महादेव जी ने विचार किया जगदम्बा के कथन का समाधान और महाप्रकाश को वर प्रदान इन दोनों का पालन समयापेक्षी अवश्य है, बस क्या था? भगवान् आदिनाथ मूलनाथ ने अपने आत्मबल समुदाय को दो भागों में विभाजित किया। एक समुदाय से पूर्वरूप में ही अवस्थित रहे दूसरे समुदाय को गोरक्षनाथ रूप में परिणत किया। वे गोरक्षनाथ एकान्त निर्जन किसी विशेष पर्वत मध्य शुद्ध स्थान में विराजमान होकर समाधिस्थ हो गये। महेश्वरानन्द भगवान् गोरक्षनाथ के प्रबल तपोबल प्रताप से वह पर्वतराज अनुपम रूप से सुशोभित हुआ। कुछ ही समय के पश्चात

योग सम्प्रदाय प्रवर्तक श्री गोरक्षनाथ जिस पर्वत पर ज्ञान मय तप में विराजमान थे, वहाँ जगदम्बा को साथ लेकर भगवान् आदिनाथ शिव ने गमन किया। मार्ग में ही कुछ विश्राम कर भगवान श्री भवानी से बोले, हे गौरि! जो यह पर्वत समक्ष दीखता है, इसमें एक महान परमपुरुष योगीराज चिरकाल से समाधिस्थ हैं। आप जाकर उनके दर्शन करें। आदिनाथ भगवान् मूलनाथ की आज्ञा को पाकर उनको प्रणाम कर महादेवी ने वहाँ से प्रस्थान किया। भगवान् गोरक्षनाथ को समाधि में बैठे ऐसे देखा मानों बहुत से सूर्य मिलकर ही प्रकाश कर रहे हैं। श्री शिव का रूप पूज्य जानकर हाथ में पुष्प लेकर श्री देवी ने गोरक्षनाथ को हृदय से आदेश किया। महादेवी ने विभिन्न विचारों के पश्चात् श्री महादेव जी के कथन का स्मरण किया, ऐसा न हो मेरे ही कथन का उत्तर देने के लिये यह कोई अचिन्त्य सामग्री रचाई गई हो? योगी की परीक्षा का यही समय है। सत्यासत्य का निश्चय परीक्षा के बिना नहीं होता, माया के कार्यों को ही जीतना कठिन है, माया तो दूर रही उसे कैसे जीता जा सकता है। मेरा नाम माया है मैं सबसे बड़ी शक्ति हूं, मैंने ब्रह्मा आदि को भी बिना वश किये नहीं छोड़ा। उमा देवी महेश्वरानन्द गोरक्षनाथ भगवान् की परीक्षा लेने को तत्पर हो गई, चतुर्धा अपनी योगमाया से उत्तम जगन्मात्र के पदार्थों को रच कर प्रत्यक्ष रूप में उपस्थित कर दिखाया और कोई पदार्थ शेष नहीं रहा, अवस्थित भगवान् गोरक्षनाथ के समक्ष महामाया के सहस्त्रों प्रयत्न इस प्रकार अस्त हो गये, जैसे मध्यान्हकालिक मार्त्तण्ड के समक्ष तारागण विलीन हो जाते हैं। भगवती ने महादेव के

वचनों को सत्य समझा, यह मेरे लिए ही अद्भुत चमत्कार का आकार खड़ा किया है। ऐसे विचार करती हुई पार्वती देवी को गोरक्षनाथ बोले हे देवी! जाओ भगवान् आदिनाथ आपका स्मरण करते हैं। योगाचार्य्य के अनुपम उपदेशामृत को पीकर वहाँ से भवानी ने भगवान् के पास प्रस्थान किया, पहुंचकर मूलनाथ आदिनाथ भगवान् को आदेश किया और कहा हे ईश्वर आपका कथित संकल्प यथार्थ है। मेरे बिना भी आप विद्यमान हैं, अत: आपकी सत्ता ही प्रधान है, यह मैंने अनुभव किया, शक्ति का लय शक्तिमान् के ही अभ्यन्तर से होता है। हे ईश्वर! ऐसा यह कौन अवस्थित योगीश्वर है, जिसने मेरी शक्ति को कुछ नहीं समझा। वह अपनी समाधि में ही अचल रहा महादेव बोले हे महेश्वरी! जिस योगी का तुमने दर्शन किया है उस योगीश्वर का नाम गोरक्षनाथ है। सर्व देव मनुष्यों का इष्ट देव है, माया से परे एवं काल का भी काल है समयापेक्षित अनेकों रूपों से प्रकृति चक्र का संचालक है। हे महादेवी मैं ही गोरक्षनाथ हूं, मेरा स्वरूप ही गोरक्षनाथ है। हम दोनों में किञ्चित भी अन्तर नहीं, प्रकाश से भिन्न प्रकाश नहीं रहता। हे महादेवी! संसार का कल्याण हो वेद गौ पृथ्वी आदि की रक्षा हो इस हेतु से मैंने गोरक्ष स्वरूप को धारण किया है। जब जब योग मार्ग की रक्षा में अवस्थित होता हूं यह गोरक्षनाथ नाम मेरे नामों में उत्कृष्ट है। भगवान् मूलनाथ बोले हे महेश्वरी! जो पुरुष योग विद्या को सेवन करता है वही मृत्यु को जीतता है, और उपायों में मृत्यु नहीं जीती जाती। अन्य उपायों से थोड़ी बहुत आयु बढ़ सकती है। योगबल महाबल है, योगी महाबली है, चाहे एक

रहे अनेक होकर विचरे चाहे भूमि में रहे चाहे आश्रम में भ्रमण करे चाहे सौ युग तक रहे, चाहे सदा अमर रहे, स्थूल शरीर से रहे, चाहे सूक्ष्म शरीर से, चाहे श्रोत्र से सुने, चाहे बिना श्रोत्र से, चाहे राजिका होकर रहे, चाहे पर्वत होकर, वह योगी ब्रह्मा विष्णु के कार्यों को भी करने में समर्थ हैं। भवानी बोली हे प्रभो! आपको कोटिश: नमस्कार आपकी माया अनन्त है। जगत् आपका उद्यान है, आप उसके माली हैं। इस प्रकार श्री महादेवी पार्वती से पूज्यमान महादेव जी कैलाश को पधारे। इधर कमलासन पर विराजमान श्री ब्रह्मा जी को योगी नारद बोले हे प्रभो! पहले मैंने आपसे यह कथा सुनी है, महादेव जी ने सिद्धनाथ मत्स्येन्द्रनाथ जी को वर दिया था कि आप नाथवंश के तथा योग मार्ग के प्रवर्त्तक होवेंगे तो फिर संसार में उन्होंने किस प्रकार योग का प्रचार किया और फिर मत्स्येन्द्रनाथ जी ने किस महामहिमशाली शिष्य को इस योग का उपदेश किया, नाथ नाम पूर्वक योगियों का सम्प्रदाय कैसे प्रवृद्ध हुआ। ब्रह्मा जी बोले हे नारद! उसके पश्चात महेश्वर मूलनाथावतार भगवान् गोरक्षनाथ जहाँ महा प्रकाश मत्स्येन्द्रनाथ जी समुद्र तट पर तप कर रहे थे वहाँ को पधारे वहाँ गोरक्षनाथ जी ने जाकर मत्स्येन्द्रनाथ जी को समाधि द्वारा मनोयोग को प्रबोधित कर योगपद्धति को पूछा और विनीत भाव से स्तुति की एवं नाथपदयोग वंश प्रवर्त्तकता को प्राप्त किया इसी भगवान् आदिनाथ मत्स्येन्द्रनाथ परम्परागत योग से गोरक्षनाथ ने योग को शक्तिपात, करुणावलोकन, आपदेशिक इन तीन शिक्षाओं के द्वारा अनेक राजा महाराजा ऋषि–मुनियों को कृतार्थ किया और उनको दिव्य देकर

अमर पद का भागी बनाया।

इति श्री स्कन्दपुराणे ब्रह्मनारदसंवादे भगवद्गोरक्षनाथावतार कथा वर्णनविषयविशिष्टि एकपञ्चाशतमोऽध्याय: सम्पूर्ण:।।५१ शुभम्।

संशोधक: फलेग्रहि: अनुमोदका नरहरि:

योगी गोरक्षनाथ

घनघोर जङ्गल में एक वटवृक्ष के नीचे गोरक्षनाथ जी बैठे थे। उस समय उनकी चित्तवृत्ति अन्तर्जगत में घूम रही थी वे आप स्वयं अपने आप बातें कर रहे थे। उसी समय भारत सम्राट नवयुवक महाराजा भर्तृहरि एक काले मृग के पीछे घोड़ा दौड़ाते हुये वहीं पर आ पहुंचे और गोरक्षनाथ के पीछे खड़े होकर उनकी अलमस्त बाते सुनने लगे।

गोरक्षनाथ– प्रार्थना करो प्रार्थना! प्रार्थना से भूमि भी फट जाती है, आकाश भी उड़ जाता है। जो काम कोई नहीं कर सकता उस काम को प्रार्थना कर सकती है, प्रार्थना करो प्रार्थना!

भर्तृहरि– (मन में) कोई महात्मा प्रतीत होते हैं।

गोरक्षनाथ– यदि तुमने उसको देख लिया तो उसके पर्दे में पर्दा ही क्या रहेगा? विचित्र पर्दा तो इसलिए बनाया है, कि उसको कोई न देखे।

भर्तृहरि– कोई तत्व ज्ञानी जैसे हैं।

गोरक्षनाथ— सारा संसार परमात्मा में है। परमात्मा मेरे में है तो महात्मा बड़ा नहीं होता परमात्मा से।

भर्तृहरि— यह बात तो ठीक जैसी नहीं है। जीवात्मा और महात्मा दोनों परमात्मा के भीतर रहते हैं। जैसे तारा और चन्द्रमा आकाश के भीतर रहते हैं।

गोरक्षनाथ— शक्ति की उपासना करने वाले रावण बन जाते हैं। शिव की उपासना करने वाले राम बनते हैं।

भर्तृहरि— इस प्रकार तो मैं एक रावण हूं। क्योंकि राजा होता है शक्ति का उपासक।

गोरक्षनाथ— इस विशाल भूगोल में सभी स्त्रियां ही स्त्रियां हैं। उनकी इच्छा है कि भूमण्डल में जो है वे सब एकमात्र स्त्री बनकर रहें।

भर्तृहरि— यह बात समझ में नहीं आई। यह मनुष्य कुछ सनकी जैसा प्रतीत होता है।

गोरक्षनाथ— इस विशाल भूगोल में सभी पागल ही पागल रहते हैं। यदि कोई होश में आने लगा तो उसको पागल लोग पागल कहने लगते हैं। क्योंकि वे लोग स्वयं पागल हैं।

भर्तृहरि— क्या सभी पागल हैं? पता चलता है कि यह मनुष्य विचार करते—करते पागल हुआ है।

गोरक्षनाथ— पृथ्वी कहती है मैं बड़ी, आकाश कहता है मैं बड़ा, स्त्री कहती है मैं बड़ी, पुरुष कहता है मैं बड़ा, बड़ी है भूल जिसने दोनों को पागल बना रखा है।

भर्तृहरि— क्या तुमने इधर कोई काला मृग देखा था?

गोरक्षनाथ– मैं यहाँ नहीं रहता, जहाँ सभी अन्धे ही अन्धे हैं, वहाँ मैं नहीं रहता। जहाँ सारे के सारे पागल हैं वहाँ मैं कैसे रह सकता हूं? जिस गांव में सारे के सारे नशेबाज हैं, उस गांव में मेरा निर्वाह कैसे हो? नहीं–नहीं स्त्रियों के नगर में मेरा निवास हो नहीं सकता।

भर्तृहरि– तुम कौन हो मेरी बात नहीं सुनते?

गोरक्षनाथ– तुम्हारे अप्रकाशित 'विधान' नामक नाटक में दो भाग हैं। एक दु:खान्त नाटक और दूसरा सुखान्त नाटक इसके बाद खेला जायेगा। किन्तु इस दु:खान्त नाटक का अन्तिम पर्दा कब उठेगा? इसकी समाप्ति किस वर्ष होगी? ऐसा न हो कि तुम सुखान्त का समय भूल जाओ तुम्हारे में कोई अवगुण न हो, परन्तु भूल का अवगुण तो है ही।

भर्तृहरि– क्या यहाँ से कोई गाँव निकट में है?

गोरक्षनाथ– यह पृथ्वी का देश बहुत बड़ा है। यह विशाल धरणी का देश पानी के मध्य में सो रहा है। पानी का देश अग्नि के देश में झूल रहा है। तो भी इस भूगोल के रहने वाले समस्त कीटाणु निश्चित होकर अपना–२ प्रबन्ध सोच रहे हैं। निर्भय घूम रहे हैं सब निशाचर!

भर्तृहरि– पूरा पागल प्रतीत होता है। मैं पूछता हूं आगरे की, उत्तर देता है गागरे की। रात होने लगी उस मृग का पता नहीं है।

उसी समय गोरक्षनाथ जी का वह पालतू काला मृग वहाँ आ पहुंचा जिसके लिये महाराजा भर्तृहरि चिन्तित हो रहे थे। महाराजा ने एक

बाण चलाया, मृग मरकर उन्हीं योगीश्वर भगवान् गोरक्षनाथ जी की गोद में गिरा। गोरक्षनाथ जी की चित्तवृत्ति अन्तर्जगत् से हटकर इस बाहरी जगत् में आई। मृग को मरा देखकर गोरक्षनाथ जी ने भर्तृहरि से कहा–

गोरक्षनाथ– तू कौन है?

भर्तृहरि– भारत के उदय अस्त का मैं राजा हूं।

गोरक्षनाथ– भारत का उदय तो जब होगा तब होगा, तेरा अस्त तो आज हो जायेगा।

भर्तृहरि– क्यों?

गोरक्षनाथ– इस निरपराध पालतू मृग को क्यों मारा?

भर्तृहरि– मैं राजा हूं, जिसे चाहूं मारूँ।

गोरक्षनाथ– मैं नहीं मानता कि राजा है, शूर नहीं क्रूर है।

भर्तृहरि– तेरे न मानने से क्या होता है?

गोरक्षनाथ– मेरे न मानने से तू राजा कैसे रह सकता है?

भर्तृहरि– क्या करेगा तू मेरा?

गोरक्षनाथ– जो तूने मृग का किया, ठीक वही!

भर्तृहरि– तेरे पास कोई हथियार नहीं है, तू मुझे कैसे मारेगा?

गोरक्षनाथ– हथियार से मारते हैं नपुंसक लोग! हमारी वाणी ही बाण है। वाणी से भूमि भी फट जाती है तो तेरे फटने में कौन सी बड़ी बात है।

भर्तृहरि– क्या मैंने कुछ अपराध किया है?

गोरक्षनाथ– बड़ा भारी!

भर्तृहरि– कौन सा?

गोरक्षनाथ– मार वही सकता है, जो बचा भी सकता है। जो बचाना

नहीं जानता, उसको मारने का अधिकार नहीं! आज्ञा नहीं!! और विधान नहीं!!!

भर्तृहरि– मरने के बाद कोई जीवित नहीं हो सकता यह बात प्रकृति के नियम के विरुद्ध है।

गोरक्षनाथ– प्रकृति के नियम को तू क्या जानता है प्रकृति का नाम ही सुना है कि उसको कभी देखा भी है? विष खाने से मनुष्य मरता है। परन्तु नीलकण्ठ शङ्कर विष खाकर अमर हो गये बिना जड़ के बूटा नहीं पर आकाश बेल जड़ के बिना ही फूलती है। सम्भव और असम्भव दोनों नियमों के नियमावली की माला जो प्रकृति ने लगा रखी है, उसका नाम भी सुना है कि कुछ जानता भी है?

भर्तृहरि– अधिक प्रलाप करने के लिये मुझे अवसर नहीं है, मृग को लेकर राजधानी लौटना है।

गोरक्षनाथ– मृग को लेकर! मृग को छोड़कर ही राजधानी जा तो मैं देखूं! बिना इसको जिलाये तू एक पग नहीं चल सकता! राजधानी में न जाकर यमराजधानी में तो अवश्य जायेगा! हजार बात की एक बात यह है कि इस मृग को बचा या मरने को तैयार हो।

भर्तृहरि– तू है कौन?

गोरक्षनाथ– प्रजा को बनाने और बिगाड़ने का खेल तो राजा लोग खेलते हैं। हम योगी वे पुरुष हैं जो राजा लोगों को बनाने और बिगाड़ने का खेल खेलते हैं।

भर्तृहरि– क्या तुम इस मृग को जीवित कर सकते हो?

गोरक्षनाथ— यदि जीवित कर दिया जाय तो क्या होगा?

भर्तृहरि— ऐसा हुआ तो भारत का सम्राट तुम्हारा दास होगा।

गोरक्षनाथ— कामिनी, कञ्चन और कीर्ति की आपात कमनीय त्रिमूर्ति राजपाट को त्याग नम्रता ब्रह्मचर्य एवं वैराग्य की आपात भयावनी त्रिमूर्ति के योग मार्ग में आओगे?

भर्तृहरि— अवश्य आऊँगा।

(इतने में) अमर विद्या प्राणकला के आचार्य गोरक्षनाथ जी उँसी क्षण मरे हुए मृग को सचमुच जिला देते हैं।

गोरक्षनाथ— राजन् भर्तृहरि!

भर्तृहरि— गुरो! योगी भर्तृहरि कहिये!

गोरक्षनाथ— राजा बड़ा या योगी?

भर्तृहरि— राजा केवल मार सकता है परन्तु योगी मार भी सकता है जिला भी सकता है।

❋ ॐ शिव गोरक्ष योगी ❋

गोरक्षनाथ मत्स्येन्द्र नाथ सम्वाद

❋ गोरक्षबोध ❋

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी तुम गुरु गुसाई, अम्हे तो शिष्य शब्द एक पूछिवा।
दया करि कहिबा, मनमध्य न करिबा रोषम्॥
आरम्भी चेला किस विधि रहे? सतगुरु होय हो बुझया कहे।१॥

भावार्थ–गोरक्षनाथ जी अपने श्री गुरुदेव से पूछते हैं कि स्वामी जी! मैं एक शब्द शिष्य होकर पूछता हूं जिसका उत्तर कृपा कर कहो–यह मन कैसे वश में होता है? शिष्य को प्रारम्भ में साधक अवस्था में कैसे रहना चाहिये? शिष्य के प्रश्नों का सत्य उत्तर देवें वही सतगुरु है।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू रहिबा हाटे वाटे, रूख वृक्ष की छाया।
तजिबा काम क्रोध, लोभ मोह संसार की माया।।
आप सो गोष्ठी अनन्त विचारं, खण्डित निद्रा अल्प आहारम्।
आरम्भी चेला इस विधि रहे, गोरक्ष सुने मत्स्येन्द्र कहे।।२।।

भावार्थ–हे शिष्य! साधक को आरम्भिक अवस्था में किसी एक जगह जगत्–प्रपंची पुरुषों में न रहे और मार्ग धर्मशाला या किसी वृक्ष की छाया में विश्राम करे और संसार की संसृति, ममता, अहता, कामना, क्रोध, मोह, लोभ वृति की धारणाओं को त्याग कर अपने आत्म–तत्व का चिंतन करे। कम भोजन तथा निद्रा–आलस्य को जीत कर रहे।

गोरक्ष उवाच :–

ॐगुरुजी! कौन देखिबा? कौन विचारिबा? कौन तत्व ले धरिबा सारम्?
कौन शब्द ले मस्तक मंडाइबा? कौन ज्ञान ले उतरिबा पारम्।।३।।

भावार्थ–हे गुरु! साधक को क्या देखना? क्या विचार करना, किस तत्व में वास करना, किसके लिये शिर मुंडा कर किस ज्ञान को लेकर पार उतरना चाहिये।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! आपा देखिबा अनन्त विचारबा, पंच तत्व ले धरिबा सारम्।
गुरु का शब्द ले मस्तक मंडाइबा, ब्रह्मज्ञान ले उतरिबा पारम्।।४।।

भावार्थ–हे शिष्य! अपने आपको देखना, अनन्त अगोचर को विचारना और तत्व–स्वरूप में वास करना, गुरु नाम सोहं शब्द ले मस्तक मुंडावे तथा ब्रह्मज्ञान को लेकर भवसागर पार उतरना चाहिये।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! मनका कौन रूप? पवन का कौन आकार?
दमकी कौन दशा? साधिबा कौन द्वार।।५।।

भावार्थ–हे गुरु ! मन का स्वरूप क्या है ? पवन का आकार क्या है? प्राणों की दशा क्या है? और किस द्वार की साधना करनी चाहिये।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! मनका शून्य रूप, पवन का निरालम्ब आकार।
दमकी अलेख दशा, साधिबा दशमा द्वार।।६।।

भावार्थ–हे शिष्य! मन का शून्य रूप है, पवन का निराकार आकार है, दम की अलेख दशा और दसवों द्वार की साधना करनी चाहिये।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी? कौन वृक्ष बिन डाल ? कौन पंख बिन सुवा?
कौन पाल बिन नीर ? कौन काल बिन मुवा।।७।।

भावार्थ–हे गुरु ! जड़ के बिना डाल क्या है, पंखों के बिना पक्षी कौन है ? किनारे बिना और कौन है ? और काल बिना कौन मरता है।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! पवन पेड़ बिन डाल, मन पंख बिन सुवा।
धीरज पाल बिन नीर, निन्द्रा काल बिन मुवा।।८।।

भावार्थ—हे शिष्य! वायु बिना पेड़ के डाल (टहनी) है, मन पक्षी बिना पंखों के, धीरज बिन पाल (किनारे) की नार (नदी) और बिना काल मृत्यु रूप नींद है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन बीरज? कौन क्षेत्र? कौन श्रवण? कौन नेत्र?
कौन जोग? कौन युक्ति? कौन मोक्ष? कौन मुक्ति।।९।।

भावार्थ—हे गुरु! किस खेत में बीज क्या है श्रवण क्या है? किस जोग में जुगति क्या है? और मोक्ष किसको कहते हैं, मुक्ति किसको कहते हैं।

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! मन्त्र वीरज, मति क्षेत्र, सुरति श्रवण, निरति क्षेत्र।
करम जोग धरम युक्ति जोति मोक्ष ज्वाला मुक्ति।।१०।।

भावार्थ—हे शिष्य! बुद्धि रूपी खेती में मन्त्र—जप का बीज फल देता है। अन्तःकरण का सुरता रूप वृक्ति को श्रवण तथा निरति चक्षु दृष्टि को नैत्र कहते हैं। कर्तव्ययोग, धर्म ही युक्ति और त्राटक साधन से त्रिकुटी स्थान ज्योति दर्शन ही बिना ज्वाला की मुक्ति है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन मूल? कौन वेला? कौन गुरु? कौन चेला?
कौन क्षेत्र? कौन मेला? कौन तत्त्व ले रमे अकेला।।११।।

भावार्थ—हे गुरु! वृक्ष को मूल का सहारा क्या है, गुरु कौन है? चेला कौन है? स्थान क्या है? मिलाप क्या है? और किस तत्व को धारण करके अकेला विचरण करता है।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू मन मूल, पवन वेला, शब्द गुरु, श्रुति चेला।
त्रिकुटी क्षेत्र, उल्टे मेला, निर्वाण तत्व ले रमो अकेला।।१२।।

भावार्थ–हे शिष्य! मन रूपी मूल का पवन सहारा है। शब्द सतगुरु, अंत:करण की एकांत सुरति वृति चेला है। त्रिकुटी स्थान पर उलट कर जीव–ईश्वर का मिलाप होता है, निरवाण ब्रह्म–तत्व के आधार पर निवृत्ति परक अकेला विचरण करो।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कौन घर चन्दर? कौन घर सूर? कौन घर काल बजावे तूर?
कौन घर पञ्च तत्व सम रहे? सतगुरु होय सो बुझाये कहे।।१३।।

भावार्थ–हे गुरु! स्वरोदय में चन्द्र कहाँ है? सूर्य का स्थान कहँ है? काल किस घर में नाद बजाता है? पांचों तत्व बराबर किस स्थान पर रहते हैं।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! मन घर चन्दा, पवन घर सूर, शून्य घर काल बजावे तूर।
ज्ञान घर पञ्च तत्व सम रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।१४।।

भावार्थ–हे शिष्य! मन के स्थान चन्द्र, पवन के संग में सूर्य शून्य के स्थान में काल का नाद बजता है, ज्ञान के स्थान में पांचों तत्व की समता रहती है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी!कौन अमावस? कौन सी पड़िवा? कहाँ का अमिरस?
कहाँ ले चड़िबा?
कौन स्थान मन उनमन रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।१५।।

भावार्थ–स्वर स्थान में अमावस क्या है? पड़वा (शुक्ल प्रतिपदा) क्या है? कहां का महारस आनन्द लेकर कहां पर चढ़ता। किस स्थान पर मन का अवधान अन्तर्ध्यान रहता है।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! रवि अमावस, चन्द्र सी पड़िया, अर्ध का महारस ऊर्ध ले चडिबा।
गगन स्थाने मन उनमन रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।१६।।

भावार्थ–हे शिष्य! सूर्य स्वर अमावस, चन्द्र स्वर प्रतिपदा, नाभी स्थान का प्राण रस लेकर गगन स्थाने चढ़ता और दसवें में अन्तर्ध्यान रहता है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! आदि का कौन गुरु? धरती का कौन भरतार?
ज्ञान का कौन स्थान? शून्य का कौन द्वार।।१७।।

भावार्थ–हे गुरु! ज्ञान कौन है? पृथ्वी का पति कौन है? ज्ञान का स्थान कौन है? शून्य का द्वार कहां है?

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! आदि का अनादि गुरु, धरती का अम्बर भरतार।
ज्ञान चिंतन स्थान, शून्य का परचा द्वार।।१८।।

भावार्थ–हे शिष्य! आदि का गुरु अनादि है, पृथ्वी का पति आकाश है, ज्ञान का चिन्तन में निवास है और शून्य का स्थान परचा (ब्रह्म) है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कौन परचे माया मोह छूटे? कौन परचे शशिधर फूटे।
कौन परचे लागे बन्ध? कौन परचे अजरामर हो कन्ध?।।१९।।

भावार्थ–हे गुरु! किस साधन से माया मोह बन्धन की निवृत्ति होती है किस परचे (साधन) से चन्द्र–सूर्य स्वर की सिद्धि होती है किस साधन से योग–बन्ध की सिद्धि तथा किस साधन से अजर बंध की सिद्धि होती है।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू!मन परचे माया मोह छूटे? पवन परचे शशिधर फूटे।
ज्ञान परचे लागे बन्ध, गुरु परचे अजरामर हो कन्ध।।२०।।

भावार्थ–हे शिष्य! मन के परचे (सन्धि–वश करने) से माया मोह की निवृत्ति, पवन वश करने से चन्द्र स्वर–सिद्धि तथा ज्ञान सिद्धि से योग बंध (जीव–ईश्वर एकता), गुरु की प्रसन्नता से अजरबंध (जीवन मुक्ति तत्व) सिद्धि की प्राप्ति होती है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कहां वसे मन? कहां वसे पवन? कहां वसे शब्द? कहां वसे चन्द?
कौन स्थान ये तत रहे? सत गुरु होय सो बुझाय कहे।।२१।।

भावार्थ–हे गुरु! मन का निवास कहां है? पवन का वासा कहां है? शब्द का निवास कहां है। चन्द्र का निवास कहां है। किस स्थान पर तत्व का वासा है।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू!हृदय वसे मन, नाभि वसे पवन, रूप वसे शब्द, गगन वसे चन्द।
उर्ध्व स्थान ये तत रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।२२।।

भावार्थ–हे योगी! मन का वास हृदय में, पवन का नाभी में, शब्द का आवास रूप में, चन्द्र–सिद्धि का वास गगन (दशवें) में तथा तत्व शब्द का वासा निम्न (नाभी) स्थान में है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! हृदय न होता तब कहां रहता मन,
नाभि न होती तब कहां रहता पवन?

रूप न होता तब कहां रहता शब्द?
गगन न होता तब कहां रहता चन्द?।।२३।।

भावार्थ–हे स्वामी! जब हृदय एक देश वाची स्थान नहीं था तब मन का वासा कहां था? नाभी वाचक स्थान नहीं होने से पवन कहां रहता? रूप की उत्पत्ति से पहले शब्द कहां था, गगन (दशवाँ) होने से पहले चन्द कहां रहता था।

मत्स्येन्द्र उवाच :

अवधू! हृदय न होता तब शून्य रहता मन,
नाभि न होती तब निराकार रहता पवन।

रूप न होता तब अकुल रहता शब्द,
गगन न होता तब अन्तरिक्ष रहता चन्द।।२४।।

भावार्थ–हे अवधू! हृदय वाची स्थान होने से मन शून्यकार रहता, नाभी के अभाव में स्फंद अलंकार रहित पवन रहता। रूप के अभाव में शब्द शून्य रहता गगन न होने के समय चन्द्र (सिद्धि) ब्रह्म–लुप्त रहता।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! राति न होती दिन कहां ते आया?
दिन प्रकाश्या राति कहां समाया?

दीप बुझाया ज्योति कहां लिया वासा?
पिण्ड न होता तो प्राण पुरुष का कहां होता निवासा।।२५।।

भावार्थ–हे गुरुदेव! रात्री थी तब दिन कहां से आया और दिन (प्रकाश) होते ही रात्री (अन्धकार) का लीन भाव कहां हो जाता है?

दीपक बुझने पर ज्योति कहां लय होती है? शरीर नहीं था तब प्राण शक्ति का निवास कहां था?

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! राति न होती दिन सहजै आया,
दिन प्रकाश्यां राति सहजै समाया।
दीप बुझाया ज्योति निरन्तर लिया वासा,
पिण्ड न होता तब प्राण पुरुष का शून्य होता निवासा।।२६।।

भावार्थ–हे योगी! अज्ञानान्धकार मूल माया प्रकृति स्वरूप अनिच्छा रात्रि में चेतनत्व–धन शक्ति प्रकाश का सहज ही समावेश हुआ, तब ज्ञान–प्रकाश चेतन प्रभाव से अज्ञान तिमिर जड़ भाव स्थितत्व का विलीन हो गया। दीपक (मानव शक्ति) के बुझने पर चैतन्य–ज्योति चिदाकाश कूटस्थ (निरन्तर) में वास करती है। शरीर न होने पर प्राण शून्याकाश में तत्व रूप सूक्ष्मांश–निवास था।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! काया मध्ये कै लख चन्द? पुष्प मध्ये कहां वसे गन्ध? दूध मध्ये कहां वसे घीव? काया मध्य कहां वसे जीव?।।२७।।

भावार्थ–हे गुरु! शरीर में चन्द्र का निवास कहां है? फूल में सुगन्ध का वास कहां है? दूध में घी तथा शरीर में जीव का आवास कहां–कहां पर है?

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! काया मध्ये दो लख चन्द्र, पुष्प मध्ये चेतन वसे गन्ध। दूध मध्ये निरन्तर वसे घीव, काया मध्ये सर्वव्यापी जीव।।२८।।

भावार्थ–शरीर में स्वरोदय इडा नाड़ी तथा त्रिकूटी स्थाने दो चन्द्र

स्थान, पुष्पों में चेतन्य–सामान गन्ध पूर्ण रहती है। दूध में घी अन्तरहित व्याप्य तथा इसी प्रकार शरीर के प्रत्येक रोमांश में जीवात्मा की अव्यह्नत शक्ति रहती है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐगुरुजी कहां वसे चन्द?कहां वसे सूर? कहां वसे नाद विन्द का मूल।
कहां चढि हंसा पीवे पाणी? कौन शक्ति प्राण घर आणी?।।२९।।

भावार्थ–हे गुरु! अन्तरहित साधना–मार्ग में चन्द्र, सूर्य तथा नाद, बिंद का स्थान कहां–कहां प़र है? हंसा कहां की उन्नति पद आरुढ़ता से शांति की बून्द पीता है और प्राण भवन में किस शान्ति का केन्द्र–बिंदु लाया जाता है?

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! ऊर्ध्व वसे चन्द्र, अधो वसे सूर, हिरदे वसे नादविन्द का मूल।
गगन चढि हसा पीवे पाणी, उलटी शक्ति आप आप घर आणी।।३०।।

भावार्थ–हे शिष्य! अन्तरहित साधना में गगन (दशवें) स्थान चन्द (ज्ञान–ध्येय) और निम्न नाभी स्थाने अग्नि–नागनि नाड़ी में सूर्य का निवास है। शब्द का निवास ह्रदय में है जो बिन्दु का मूल स्रोत्र–केन्द्र है। जीवात्मा पवन कसोटी से दशवें चढ़कर शान्ति बून्द को प्राप्त करता है। अपनी शक्ति को उल्टी कर स्थिर की गई।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कथमुत्पद्यते नादः? कथं नादः समो भवेत्।
कथं संस्थाप्यते नादः? कथं नादो विलीयते।।३१।।

भावार्थ–हे गुरु! शब्द की उत्पति कहां होती है? और शब्द समभाव? कहां स्थापन? एवं कहां विलय होता है?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! ॐकारदुत्थितो नादः शून्ये नादः समो भवेत्।
पवने स्थाप्यते नादो, नादो ब्रह्मणि लीयते।।३२।।

भावार्थ—हे शिष्य! ओ३म्कार बीज मन्त्र से शब्द की उत्पति, शून्याकाश में नाद की समता पवन (वायु) के संग से (शब्द ध्वनि) की स्थिरता और निरंजन (महाकाश—गगन) एक्यता में शब्द का विलय हो जाता है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! नादेन नादिवा विन्देन विन्दिवा, गगने न लाइवा आसा।
नाद बिंदु जब दोउ न होयगा, तब प्राण पुरुष का कहां होइगा वासा?।।३३।।

भावार्थ—हे गुरु! सृष्टि के आरम्भ अन्त में नाद तथा शब्दाकाश बिन्दु तथा वीर्य—प्रजनन शक्ति नहीं थी। शुन्याकाश का आशाद्वार और नाद बिंदु दोनों के अभाव में प्राण वायु का निवास कहां होगा।

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! नादे भी नादिवा विन्दे भी विन्दिवा गगने भी लाइवा आसा।
नाद विंद जब दोउ न होइगा, तब प्राण पुरुष का निरंतर होइगा वासा।।३४।।

भावार्थ—हे अवधू! शब्द, शब्दाकाश, बिन्दु:प्रजनन शक्ति, शुन्याकाश—आशाद्वार (नाद बिंदु) रहित सृष्टि में अणु—परमाणु वाद सिद्धान्तानुसार प्राण—चैतन्य शक्ति का महाकाश भूम में निवास होगा।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! आकार छूटसी, निराकार होसी, पवन न होसी पानी।
चन्द सूरज दोउ न होसी, तव हंस की कौन सी निशानी?।।३५।।

भावार्थ—हे गुरु! देहाध्यास सृष्टयाकार प्रलय होते समय वायु

जल चन्द्र, सूर्यादि पांचों तत्व नहीं रहेंगे तब जीवात्मा का निवास कहां होगा।

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! सहज हंस का खेल भणीजै, शून्य हंस का वासा।
सहजे आकार होसी, तब परम जोती हंस प्रकाश्या।।३६।।

भावार्थ—हे शिष्य! साकार सृष्टि देह जीवात्मा का लीला ख्याल है, जब यह आकार विलय हो जायेगा तब स्थल—सृष्टि उत्पत्ति से पूर्व की स्थितिवश शून्याकार परम चैतन्य प्रभा स्वरूप जीवात्मा रहेगा।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! अमूल का कौन मूल? शून्य का कथं वास?
पद का कौन गुरु? पूछत गोरक्षनाथ।।३७।।

भावार्थ—हे गुरु! जो सृष्टि स्वरूप वृक्ष अमूल (बिना गौढ, जड़ के) है तो पद का गुरुत्व निवास कौन है?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! अमूल का शून्य मूल, शून्य का निरन्तर वास।
पद का निर्वाण गुरु, कहत मत्स्येन्द्रनाथ।।३८।।

भावार्थ—हे शिष्य! अस्थिर सृष्टि का मूल तत्व पिता आकाश है, जिसका निवास अर्ध बिन्दु तुरियगा में है। तिस का गुरुत्व माया उपाधि रहित कल्याण स्वरूप है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कथमुत्पद्यते प्राण:? कथमुत्पद्यते मन:।
कथमुत्पद्यते वाचा? कथं वाचा विलीयते? ।।३९।।

भावार्थ—हे गुरु! प्राण उत्पति कहां से हुआ। मन की वाणी की उत्पति कहां से होकर वाणी का विलय कहां हो जाता है।

मत्स्येन्द्र उवाच :-

अवधू! शून्यादुत्पद्यते प्राणः प्राणादुत्पद्यते मनः।
मनसो जायते वाचा, वाचा मनसि लीयते।।४०।।

भावार्थ—हे शिष्य! आकाश को स्फंद गति से वायु (प्राण), प्राण से मन क्रमशः वाणी का उद्भव हुआ और वाणी का मन में विलय हो जाता है।

गोरक्ष उवाच :-

ॐ गुरुजी! कौन सरोवर? कौन सो नाला? कौन मुख होई वंचिवा काला।
जोग अगोचर कैसे लौ लहै? मन पवना कैसे सम रहे?।।४१।।

भावार्थ—हे गुरु! जो स्थिर तालाब बहता रहे वह कौन है? किस मुख से यम—जाल (भव—चक्र) से मुक्ति होय? प्राणी चैतन्य—पद कैसे प्राप्त करे और मन—पवन की संयमता कैसे रह सकती है।

श्री मत्स्येन्द्र उवाच :-

अवधू! मन सरोवर अंगुल बारा बहे, रोज करे जप थिरता गहे।
अरध उरध अगोचर लौ लहे, मन पवना ऐसे सम रहै।।४२।।

भावार्थ—हे शिष्य! मन स्वरूप तालाब बारह अंगुल स्वरोदय चन्द्र स्वर में बहता रहता है और एकान्त मनन (जप—स्मरण) करने से स्थिर (सुषुमना) भाव रहता है। साधना से प्राणी मुक्ति प्राप्त करता है और ऐसे ही मन पवन एकता (संयम) रहता है।

गोरक्ष उवाच :-

ॐ गुरुजी! कौन सो विषमी? कैसे सन्ध? कौन चक्र लागे बन्ध।
कौन चेतन मन उनमन रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।४३।।

भावार्थ—कठिनाई पूर्व स्थल—भूमि कौन है? और किस बंध से चक्र सिद्धि होती है ? कौन चेतन मन है जो उनमुन में रहता है।

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! इङ्गला पिङ्गला विषमी सन्ध, ताके ऊपर लागे बन्ध।
सदा चेतन मन उनमन रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।४४।।

भावार्थ—हे शिष्य! मल, विक्षेप सहित दुष्साध्य भूमि ही योग में कठिनाई है। नाभी के उड़ियान बन्ध से सिद्ध मूर्त तथा साक्षी चेतन ही उनमुनि में रहता है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कहां उत्पन्ना आदि? कहां आदि की स्तुति समाई।
ये तत्व कहो समझाई? जहां हमारी उत्पत्ति रहाई।।४५।।

भावार्थ—हे गुरु! जीवात्मा कहां से उत्पन्न हुआ, कहां विलीन होगा अर्थात् व्यापक कहां है और समा कहां जायेगा। इस तत्व को समझा कर आदि, मध्य, अन्त जनक स्थिति में हमारी उत्पत्ति को कहो।

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधूत! तिलमध्ये तथा तैल, काष्ठमध्ये यथानलः।
पुष्पमध्ये यथा वासस्तथा देहे निरञ्जनः।।४६।।

भावार्थ—हे शिष्य! जीवात्मा का व्यापय—भाव सदैव इस शरीर में तिलों में तेल, लकड़ी में सामान्य अग्नि, फूल में सुगन्धी की भांति सामान्य चेतन्य अवस्था से रहती है। जीवात्मा अनादि, सत्य अविनाशी है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! सर्पिणी कुहके कौन सुभाव? वङ्कनाल है कौन ठांव?
कहां कहां प्राण निद्रा करे, पिण्डमध्ये प्राण कहां होई सञ्चरे।।४७।।

भावार्थ–हे गुरु! योग वृति में दुःसाध्य सर्पणी (नागनि) क्या है, कहां निवास है, बंक नाल का स्थान कहां है? प्राणी जब विश्राम काले निन्द्रा मध्य निशि करे तब शरीर में प्राण–चैतन्य का निवास कहां रहता है।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! सर्पिणी कुहकै सहज सुभाव, वङ्कनाल है नाभि ठांव।
मनमध्ये प्राण निद्रा करे, पिण्ड मध्ये प्राण अवछन्न होइ रहे।।४८।।

भावार्थ–हे शिष्य! साधना स्थल में एक नागनी नामक गोलाकार नाड़ी है, जिसका मुख सदैव ऊपर रहता है, जिसे पश्चिमोत्थान नामक आसन द्वारा जाग्रत कर निम्नोन्मुख करि के योगी अमृत पान करते हैं। बंकनाल दो प्रकार की है जिसमें नाभि स्थान मुक्त बंक है। जब प्राणी विश्राम करे तब शरीर में शक्ति स्वच्छन्द व्यापक रहती है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कौन चक्रमै दृढ़ कर चन्द? कौन चक्रमै लागै बन्ध।
कौन चक्रमै पवन निरोधे? कौन चक्रमै मन प्रमोदे?
कौन चक्रमै धरिये ध्यान? कौन चक्र लीजै विश्राम।।४९।।

भावार्थ–हे गुरु! प्रकाशमय ज्योति की प्राप्ति चन्द्र किस चक्र में करता है? किस चक्र के बन्ध से अमृत प्राप्ति होती है? किस चक्र साधन से प्राण–वायु वशीकरण स्थिर होती है और मन को शिक्षा किस चक्र साधन से प्राप्त होती है। किस चक्र में ध्यान करना तथा किस चक्र साधन से चित विश्राम होता है।

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! अरध चक्रमै दृढ़ कर चन्द, उरध चक्रमै लागे बन्ध।
नाभि चक्रमै पवन निरोधे, हृदय चक्रमै मन परमोधे।
कण्ठ चक्रमै धरिये ध्यान, ज्ञान चक्र लीजै विश्राम।।५०।।

भावार्थ—हे शिष्य! मूलाधार से नाभी—प्रमाण चक्र सिद्धि से चन्द्र—स्वर सिद्ध होकर ज्ञान प्रकाश करता है। जालन्धर बन्ध लगाकर अमृत प्राप्त करना और नाभि स्थाने स्वाधिष्ठान सिद्धि से प्राण—वायु का विरोध करना हृदय स्थाने अनाहत चक्र से मन को अध्यात्म शिक्षा मिलती है। कण्ठ स्थाने विशुद्ध चक्र में जीवात्मा 'सोहं' ध्वनि का और ज्ञान चक्र (आज्ञा) में ज्योति दर्शनोपरान्त ब्रह्मरन्ध्र में विश्राम प्राप्ति होती है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन उपदेश माया शून्य? कौन विचारे पाप न पुण्ये?
कौन ग्रह ले मन उनमन रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।५१।।

भावार्थ—हे गुरु! माया की हद किस शून्य तक है? नवग्रहों से पाप—पुण्य की प्राप्ति कैसे होती है? किस ग्रह (देव) को लेकर उनमुन (ध्येय—मग्न) रहें?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! तत्त्वोपदेश माया शून्य, नवग्रह विचारे पाप न पुण्य।
शिव शक्ति ले मन उनमुन रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।५२।।

भावार्थ—हे योगी! वाणी शून्य तक माया की हद है। विचार द्वारा साधना करने से नवग्रह का पाप और पुण्य द्वन्द विलय होता है, जैसे—

रवि, मंगल, शनि प्रवर्तक पिंगला नाड़ी, सूर्य स्वर तमोगुण रुद्र

ध्यान में कर्मों का विलय। सोम, बुध–स्वरूप इडा नाड़ी चन्द्र स्वर रजोगुण प्रधान ब्रह्मा–विधान स्थापन शांति साधन। गुरु, शुक्र प्रणव सुषुमना सत स्वर सतोगुण विष्णु प्रधान सात्विक स्थापना धारण मय ध्यान से नवग्रह जनित पाप–पुण्य द्वेष–ताप निवृति होती है। शिव–शक्ति (सुरता–पवन) के मानस संगम को लेकर मुर्द्धा स्थाने उनमुन (समाधिस्थ ध्यान) में रहे।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कौन गृह? कौन वास? कौन गर्भ रहे दश मास?
कौन मुख पानी? कौन मुख क्षीर? कौन दशा उपजिया शरीर।।५३।।

भावार्थ–हे गुरु! किस घर में किस का निवास है? गर्भवास में दश मास कौन रहा? किस मुख से पानी भी खीर (दूध) के स्ववाद में हो जाय तथा किस दशा में शरीर की उत्पत्ति हुई है।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! अनिल ग्रह अर्ध गति वास, अतीत गर्भ रहे दश मास।
मन मुख पानी पवन मुख क्षीर, ॐकार दशा उपजिया शरीर।।५४।।

भावार्थ–हे योगी! अग्नि भवन स्थूल पिण्ड में आत्मा ने निवास किया, वही अपने अहंता ममता कर संसार चक्र में जन्म मरण पाकर वासना से गर्भ वास में आया। नाभी स्थाने नागनि मुख पलटने से मूर्द्धा–द्रवित जल ही दूध अमृत स्वरूप प्राप्त होता। प्राण वायु के स्तम्भ बन्ध से स्थूल शरीर की स्थिति है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कौन नाली सञ्चरे शिव? कौन मुख पैठा जीव?
कौन गर्भ वसन्ता वास? कौन नाली रस पीव?।।५५।।

भावार्थ–गोरक्षनाथ जी मत्स्येन्द्र नाथ जी से पूछते हैं कि हे गुरु! किस नाड़ी से कल्याण (शिव) तत्व की प्राप्ति होती है, किस द्वार से जीवात्मा की स्थित–वृति होती है। गर्भवास में किसने निवास लिया और किस द्वार से गर्भस्थ शिशु रस पीता है।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! संखनि नाली सञ्चरे शिव, सुषमनी नाली पैठा जीव।
माता (शून्य) गर्भ वसन्ता वास, वङ्कनाल रस पीवे जीव।।५६।।

भावार्थ–हे शिष्य! कनपटी स्थाने दस नाड़ियों में से संखनी नाड़ी द्वारा कल्याण (समाधि तत्व) की प्राप्ति होती है, सुषुमणा नाड़ी से जीव में प्रवेश लिया और मेरी तेरी ममत्व वृति रूप मायाध्यास ने गर्भ में निवास लिया। युक्त त्रिवेणी सनाल मुक्त बंक नाल द्वारा पोषण रस पीता है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरूजी! कौन शून्य उत्पन्ना आई, कौन शून्य सत गुरु बुझाई।
कौन शून्य रहिया समाई, ये तत कहो गुरु समझाई।।५७।।

भावार्थ–हे गुरु! किस शून्य में उत्पति हुई? किस शून्य का ज्ञान सतगुरु ने समझाया? किस शून्य में उलट कर समाया? इस तत्व को समझा कर कहो।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! सहज शून्य उत्पन्ना आई, समीप शून्य सतगुरु बुझाई।
अतीत शून्य में रहे समाई, ये तत कहे गुरु समझाई।।५८।।

भावार्थ–हे शिष्य! स्वाभाविक क्रिया शून्य से कर्म क्षेत्र से उत्पति, समता शून्य वृति का दृढात्म–ज्ञान सतगुरु ने समझाया। पंचभूतात्मा का साक्ष्य महाशून्य में परिवर्तन समाय रहे यही परम तत्व समझाकर कहता हूं।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन मुख लागे समाधि? कौन मुख छूटे उपाधि?
कौन मुख लागे तुरिया बन्ध? कौन मुख अजरामन कन्ध।।५९।।

भावार्थ—हे गुरु! किस वस्तु के अन्तर्हित होने से समाधि लगती है? किस अन्तर्हित से प्रपंचोपाधि से निवृत्ति होती है? किस अन्तर्हित से साक्षी—तुरिया बन्ध की सिद्धि होती है? किस अन्तर्हित से अजर—अमृत बिन्दु की प्राप्ति होती है?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! मन मुख लागे समाधि, पवन मुख छूटे उपाधि।
सुरति मुख लागे तुरिया बन्ध, गुरु मुख अजरामर कन्ध।।६०।।

भावार्थ—हे शिष्य! मन के अन्तर्हित होने से समाधि लगती है प्राण—वायु के अन्तर्हित होने से प्रापंचिक माया उपाधि से निवृति होती है। अन्तस्थ श्रवणेन्द्रिय वृति सुरति के अन्तरमुख होने से साक्ष्य—तुरिया बन्ध की सिद्धि तथा गुरु शब्द के अन्तर्हित साधन से अजर—अमृत स्वादु की प्राप्ति होती है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन सोवे? कौन जागे? कौन दशहुं दिशि जाय?
कहां ते उठत पवन? कहां ते होठ कण्ठ तालूका बजाय?।।६१।।

भावार्थ—हे गुरु! इस शरीर में अष्ट पहरी कौन जागे, कौन सोचता है। कौन दशों दिशा में दौड़ता है? प्राण—वायु कहां से उर्ध्व गामी होता है, और कण्ठ तालिका की ध्वनिक नाड़ियों को कौन बजाता है।?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! मन सोवे पवन जागे, कल्पना दशहुं दिशि जाय।
नाभि से उठत पवन, हृदयते होठ कण्ठ तालुका बजाय।।६२।।

भावार्थ–हे शिष्य! सुषुप्तावस्था में मन ही अन्तर्मुख संकल्प विकल्प रहित होता ही मानो सोता है। प्राण–वायु ही तीनों अवस्थाओं में जाग्रत रहता है। अन्तस्थ कल्पना ही जाग्रत विश्व जीव चक्षु स्थानी होकर तथा स्वप्नावस्था में तैजस नामक जी कण्ठ हिता नाम सूक्ष्म रोम सहस्राणु भाग में दौड़ती है। पवन नाभी से उर्ध्व–गामी होकर चलता है। भाषा–विज्ञान के सिद्धान्त से कण्ठगत ध्वनि–तन्त्रीयों को होठ ही चलने की यांत्रिक–गति प्रदान करता है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कहां ते मन करे गुण ध्यान? कहां ते पवन करे आवागमन? कौन मुख चन्दा निर्झर झरे? कौन मुख काल निद्रा करे?।।६३।।

भावार्थ–हे गुरु! साधक को मन की स्थिति कहाँ पर रहने से बहुगुणा करे? मन का आवागमन कहाँ से होता है? किस अन्तर्हित से ज्योति स्वर चन्द्र का उदय होता है और किस अन्तर्हित काल की सुषुप्तावस्था होती है।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! हिरदयते मन करे गुन ध्यान, नाभिते करे आवागमन। आप मुख चन्दा निर्झर करे, मनसुख काल निद्रा करे।।६४।।

भावार्थ–हे शिष्य! अनाहत चक्र हृदय स्थान की साधना से मन वश होकर साधक का हित करता है। नाभी से प्राण उर्धगामी होकर पुनः अपने अर्ध स्थान को प्राप्त करता है। अन्तर्हित चन्द्र स्वर अपने श्रम–साध्य कसोटी से सुखानन्द तथा मन अन्तर्मुख निश्चय से काल का दमन होता है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कौन शून्यते जोति पलटे? कौन शून्य वाचा फुरे?
परम शून्यते त्रिभुवन सार, अतीत शून्यते उतरे पार।।६५।।

भावार्थ–हे गुरु! किस शून्य की ज्योति दर्शन कर पवन–प्राण पलटे? किस शून्य से वाणी का संस्फुर होता है, किस शून्य से तीनों लोकों का सार तत्व उद्बोधन होता है? किस शून्य से पार उतरना है?

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! उग्र शून्यते जोति पलटे, आकाश शून्यते वाचा फुरे।
रम शून्यते त्रिभुवन सार, अतीत शून्यते उतरे पार।।६६।।

भावार्थ–हे शिष्य! उग्र शून्य से ज्योति पलट कर त्रिकुटी में साधक को दर्शन होते हैं, अभय शून्य से वाणी का उपादन कारण बनता है, परम शून्य ही तीनों लोकों का आवास–उत्पति द्वार है, अतीत शून्य (भयावह दृश्य) से पार उतरना है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कथं क्षुधः समुत्पत्तिः? कथमाहारसम्भवः ?
कथमुत्पद्यते निद्रा? कथं कालस्य सम्भवः।।६७।।

भावार्थ–हे गुरु! बुद्धि का जन्म कहाँ से, भोजन वृत्ति (क्षुधा तृप्ति) युक्ति का जन्म कहां से हुआ। शय्याकाले निद्रा का जन्म कहां से होता है और काल (मृत्यु–यम) का जन्म कहां से होता है।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! मनसः क्षुधः उत्पत्तिः, क्षुधः आहारसम्भवः।
आहारसम्भवा निद्रा निद्रायाः कालसम्भवः।।६८।।

भावार्थ—हे साधक! मन की विवेक वृत्ति से बुद्धि का, बुद्धि की आवश्यकता पूर्ति बोद्ध पूर्ण खोज से आविष्कृत भोजन (क्षुधा निवृत्ति) का जन्म हुआ। भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चौष्यादि चतुर्विध भोजन से निंद्रा (स्वप्न—सुषुप्ति) अवस्था की उत्पत्ति और निद्रालस्य से काल (मृत्यु जनक प्रवृत्ति) का जन्म होता है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! दिव्य दृष्टि कैसे होइबा, कैसे होइबा ज्ञान विज्ञान।
गुरु शिष्य काया के रहै, कैसे होईबा पार।।६९।।

भावार्थ—हे गुरु! दिव्य दृष्टि कैसे प्राप्त होती है? परमेश्वर का विज्ञान—ज्ञान कैसे प्राप्त होता है और गुरु—शिष्य के कितने रूप में रहे। भव—सागर से पार कैसे उतरना होता है।

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! दृष्टिते दिव्य दृष्टि होईवा, ज्ञानते विज्ञान होइवा।
गुरु शिष्य की एकै काया, परचा होइ तो बहुरि न आया!।।७०।।

भावार्थ—हे शिष्य! त्राटक दृष्टिभेदन की साधना से दूरदर्शिता या पारदर्शिता की दिव्य दृष्टि होती है, अध्यात्म ज्ञान से ही ईश—विज्ञान तथा भौतिक—विज्ञान का बोध होता है, गुरु और शिष्य का भौतिक शरीर दो है किंतु शब्द—आत्म एक है और भव सिंधु पार होने को बहुरि जन्म मूल अज्ञान मूल वासना को करना चाहिये।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कहां ते उठन्त सांस उसास? कहां परमहंस वास?
कौन शून्य मन स्थिर ह्वै रहे, सतगुरु होय सो बुझाय कहे!।।७१।।

भावार्थ—हे गुरुजी! श्वासोश्वास कहां से उठता है? जीवात्मा का निवास कहां है? मन स्थिर कैसे होता है?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! अरधते उठत सांस उसासं, उरधे परमहंस का वास।
सहज शून्य मनस्थिर ह्वै रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।७२।।

भावार्थ—हे साधक! नाभी स्थान से उठता है, दशवें द्वार ब्रह्मरंध्र से जीवात्मा का आवास है। साधना से मन स्थित एकान्त रहता है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कैसे आवे कैसे जाई? कैसे जीव रहे समाई?
कैसे तन मन स्थिर रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।७३।।

भावार्थ—हे गुरु! प्राणात्मा शरीर में कैसे आता है, कैसे जाता है? शरीर निधन पर जीव कहां समा जाता है? मन तथा सूक्ष्म शरीर सामग्री कहाँ स्थिर रहती है?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! सहजे आवे सहजे जाई, सहजे जीव रहे समाई।
सहजे तन मन स्थिर रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।७४।।

भावार्थ—हे शिष्य! अणु—परमाणु शून्य ही आती जाती है और तत्व अंश सामग्री सूक्ष्माणु शून्य में ही समाती है। साधन काल कर्मयोग से तन मन स्थिर आयु प्राणन्ते भौतिक प्राकृतिक मर्यादा की स्वाभाविक स्थिति में रहती है।

गोरक्ष उवाच :—

गुरुजी! कहां वसे शक्ति? कहां वसे शिव? कहां वसे पवन? कहां वसे जीव।
कहां होई इनका परचा लहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।७५।।

भावार्थ—हे भगवन! प्राकृतिक भूगोल खगोल में तथा शंरीर में प्रकृति—शक्ति, जीवात्मा—शंकर का कहां निवास है? प्राण और जीव

कहां रहते हैं? इन सबका संयोग कहां पर कैसे होता है? यह समझा कर कहिये।

मत्स्येन्द्र उवाच :-

अवधू! अरध वसे शक्ति उरध वसे शिव, भीतर वसे पवन अंतरिक्ष से जीव।
निरन्तर होइ इनका परचा लहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।७६।।

भावार्थ–हे शिष्य! पृथ्वी–नाभी तल पर प्रकृति–शक्ति बसती है? ऊपर गगन–अम्बर में कल्याण तत्व का वास है? ब्रह्माण्ड–पिंड क्रिया चालक प्राण भीतर रहता है और जो शून्य मण्डल में रहे वही जीव है। प्रलय–काल अथवा साधना–काल में इनका संयोग होता है।

गोरक्ष उवाच :-

ॐ गुरुजी! कौन मुख बैठे? कौन मुख चले?
कौन मुख बोले? कौन मुख मिले?
कौन सुरति में निर्भय रहे? सतगुरु होई सो बुझाय कहे।।७७।।

भावार्थ–हे गुरु! साधक को साधना पथ में उठना, बैठना और बोलना, मिलना, चलना तथा निर्भय कैसे रहना चाहिये।

मत्स्येन्द्र उवाच :-

अवधू! सुरति मुख मुख बैठे, सुरति मुख चले!
सुरति मुख बोले सुरति मुख मिले?
सुरति निरन्तर निर्भय रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।७८।।

भावार्थ–हे शिष्य! साधक को साधना पथ में महान सावधानी से सदैव साधनोन्मुख तत्पर रहना, चलना, उठना, मिलना, बैठना आदि क्रिया करते हुये पूर्णतः अन्तर्मुखी निर्भयता से रहना चाहिये।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन सो शब्द? कौन सो सुरति?

कौन सो पवन? कौन सो निरति?

दुविधा मेट कैसे रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।७९।।

भावार्थ—हे गुरु! शब्द कौन है, सुरति क्या है! शरीर के बन्ध क्या हैं? और यह बन्धन कैसे मिटे?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! अनहद शब्द चेतन सो सुरिति, स्वासा पवन निरालम्ब निरति।

दुविधा मेटि सहज में रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।८०।।

भावार्थ—हे शिष्य! शब्द सीमा—आकार रहित है, श्रेष्ठ साधन प्रवृति मुमुक्ष—वृर्ति ही सुरति है। अन्तर्मुख—वृति आशा ही शरीर और जीव का जड़—चेतन बन्ध है। बहिरंग विष भोगिणी इच्छाओं—आशाओं का बन्ध होकर साधना में लगा रहे तो जीव के बन्ध निवृत होकर मुक्त स्वरूप स्थित रहे।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन सो आसन? कौन सो ज्ञान?

किस विधि बाला धरिये ध्यान?

कैसे अवगति का सुख लहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे?।।८१।।

भावार्थ—हे गुरु! किस आसन से कैसा ज्ञान ले, साधक किस प्रकार ध्यान धरे। परमानन्द की प्राप्ति कैसे होय?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! सन्तोष आसन विचार सो ज्ञान,

काया तजि करि धरियो ध्यान।

गुरुमुख अवगति की सुख लहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।८२।।

भावार्थ–हे साधक! सन्तोष का आसन, विवेक–ज्ञान, शरीर से आसन, प्रत्याहारादि साधना सहित ध्यान करे और गुरु उपदेश निष्ठा से परमानन्द की प्राप्ति होती है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कौन सो सन्तोष? कौन सो विचार?
कौन सो ध्यान काया के पार?
कैसे मनसा इनमें रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे॥८३॥

भावार्थ–हे गुरु! सन्तोष कैसा विचार कैसा? शरीर से पार ध्यान कैसा? इनमें मन कैसे रहे?

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! निर्भय सन्तोष अभय विचार दुहूं में ध्यान काया के पार।
गुरु मुख मनसा इनमें रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे॥८४॥

भावार्थ–हे शिष्य! निर्भय सन्तोष, अनुभव विचार और ब्रह्मरन्ध्र (दशवें) द्वार का ध्यान काया के पार का है। गुरुमुखी सुगुरा शिष्य मन इनमें अन्तर्हित रहता है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! पाव बिना कौन मारग? चक्षु विन कौन दृष्टि?
कर्ण विन कौन श्रवण? मुख बिन कौन शब्द?॥८५॥

भावार्थ–हे गुरु! इन्द्रिय विष रहित व्यवहृत कार्य कौन है। जैसे–पांव बिन मार्ग, नेत्र बिना दृष्टि, कानों के बिना सुनना और मुख के बिना बोलना।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! पाव विन विचार मार्ग, चक्षु विन निरन्तर दृष्टि।
कर्ण विन श्रुति श्रवण, मुख विन लय शब्द॥८६॥

भावार्थ–हे शिष्य! विचार मार्ग पांव बिना है, अन्तस्थ ज्योति चक्षु बिना है। अन्तर्नादमध्य गूंज सुनने की क्रिया कानों बिना है, अन्तःकरण की लौ ही बिना मुख के शब्द है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कौन सी धोति? कौन सो आचार?

कौन सो जाप मन तजै विकार?

कौन भावते मन निर्भय रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।८७।।

भावार्थ–हे गुरु! अन्तस्थ मल का कौन धोता है? आचार कौन है, किस जप से मन की शुद्धी होती है? किस भाव से निर्भय रहे।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! ध्यान सो धौती, ब्रह्म सो आचार,

अजपा जाप मन तजे विकार।

आत्मभावते निर्भय रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।८८।।

भावार्थ–हे शिष्य! मल विक्षेपादि अन्तस्थ दोषों को निरावर्ण कर्ता ध्यान है, विचार ही उत्तम आचार–संहिता है। मानस (सुरति स्वासा एवं मन के एकीकरण से किया गया) जप ही मन को शुद्ध करता है। अनुभव स्थिति में निर्भय रहना चाहिये।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कौन सो वायु, कौन सो आप?

कौन सी माई, कौन सो बाप?

कैसे मन मन्दिर में रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।८९।।

भावार्थ–हे गुरु! ओ३म्कार कौन है, आप कौन है ? माता

कौन? पिता कौन है, मन में सदैव शीतलता समुन्द्र सम्पूर्ण भरा कब रहे?

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! शब्द सो वायु, ज्योति सो आप,
शून्य सी माई चेतन सो बाप।
निश्चल मन मन्दिर में रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।९०।।

भावार्थ–हे अवधू! शब्द ही ॐ है, ज्योति स्वयं अपना स्वरूप है। शून्य मय प्रकृति ही सब की माता है, चेतना–सत्ता ही पिता है। मद का ध्येयाकारे निश्चय बनने से शीतल–सिंधु पूर्ण रहता है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कौन सो चेतन? कौन सो सार?
कौन सी निद्रा कौन सो काल?
कौन में पञ्च तत्त्व सम रहे, सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।९१।।

भावार्थ–हे गुरु! चेतन कौन है? सार तत्व क्या है ? उत्पति क्या है? काल (विनाश) क्या है? पंच तत्व किसमें विलय होकर रहते हैं?

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! ज्योति सो चेतन निर्भर सार, जागिबा उत्पत्ति निद्रा काल।
ज्योति में पञ्च तत्त्व सम रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।९२।।

भावार्थ–हे शिष्य! ज्योति चेतन है, निर्भय तत्व–सार है। जाग्रत काल उत्पत्ति है, निद्रा–सुप्त काल की मृत्यु (विनाश) है। ज्योति (चेतन) में पांचों तत्वों को विलय होता है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन सोवे? कौन जागे? कौन रूप में आपा जोवे?
कौन रूप में कैसे रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।९३।।

भावार्थ—हे गुरु! सोता कौन? जागता कौन? अपना स्वरूप कहां देखे? किस स्वरूप में युगान्तर—काल तक अटल रहे।

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! शबद जागे, शक्ति सोवे, आदि रूप में आपा जोवे।
अरूप रूप में जुगजुग रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।९४।।

भावार्थ—हे शिष्य! शब्द जागता है, शक्ति सुप्त है, अदृष्ट अमुष्ट स्वरूप में आपको ज्ञान मार्ग से समदृष्टि से देखे और अटल, रूप वर्ण रहित युगान्तर काल तक स्थिर रहता है।

गोरक्ष उवाच :—

गुरुजी! कौन मुखा रहनी? कौन मुखा ध्यान?
कौन मुखा अमीरस? कौन मुखा प्रान?
कौन मुख छेद विदेही रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।९५।।

भावार्थ—हे गुरु! किसके सन्मुख रहना, किसके सन्मुख ध्यान, अमृत प्राप्ति, पीना तथा किस सन्मुखता को छेदने से शरीर रहे सो कहिये।

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! गुरुमुख रहनी शक्ति मुख ध्यान,
गगन मुख अमीरस चेतन मुख प्रान।
आशा मुख छेद विदेही रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।९६।।

भावार्थ—हे शिष्य! साधना के सन्मुख रहना, भक्ति (उपासना) के

सन्मुख रहकर करना। गुरु के सन्मुख से ज्ञान अमृत चेतन (सावधान) सन्मुख रहकर पीना और आशा मुख को मर्दन करके अमर रहिये।।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन मुखा आवे! कौन मुखा जाये?
कौन मुखा होय काल को खाय?
कौन मुख होय ज्योति में रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।९७।।

भावार्थ—हे गुरु! किसके सन्मुख आवे, जावे और काल को खावे, कौन मुख होय ज्योति में समाय रहे।

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! सहज मुख आवे शक्ति मुख जाय, निष्पक्ष हो काल को खाय।
निराश मुख होई ज्योति में रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।९८।।

भावार्थ—हे शिष्य! साधना सन्मुख आवे जावे बहिरंग क्रिया तथा प्राणायाम क्रिया भेद में साधन सन्मुख निरपक्ष होकर मृत्यु का अपघन करे और निराशा सन्मुख होय ज्योति (चेतन) में समाये रहे।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन सो काया? कौन सो प्राण? कौन पुरुष का धरिये ध्यान।
कौन स्थान धर काल सो रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।९९।।

भावार्थ—हे गुरु! वस्तुत: शरीर कौन है, प्राण कौन है, किस पुरुष का ध्यान करना चाहिये? किस स्थान पर मन मृत्यु भय से दूर रहता है।

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! पवन सो काया मन सो प्रान, परम पुरुष का धरिये ध्यान।
सहज स्थान धरकाल सो रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।१००।।

भावार्थ—हे शिष्य! मनोमय सृष्टि साधक के प्रयाण में मन ही शरीर है, प्राण पवन है, परमात्मा का ध्यान करना चाहिये साधन स्थान स्थित मन मृत्यु से दूर रहता है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन सो कूँची? कौन सो ताला?
कौन सो बूढ़ा? कौन सो बाला?
कौन स्थान मन चेतन रहे, सतगुरु होय सो बुझाय कहे।१०१।।

भावार्थ—हे गुरु! ताला, कूँची कौन है? कौन बूढ़ा, कौन बालक है? किस स्थान में मन ध्येयाकार आनन्दमय रहता है?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! शब्द सो कूँची शब्द सो ताला अचेतन बूढ़ा चेतन बाला।
ज्ञान स्थान मन चेतन रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।१०२।।

भावार्थ—हे शिष्य! शब्द मय बन्धन (ताला) की निवृत्ति शब्द वेद वाक्य ही चाबी है, जर है सोई वृद्ध है, चेतन ही बालक है। ज्ञान—भूमिकारुढ़ मन ही आनन्दमय रहता है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन सो साधक? कौन सो सिद्ध?
कौन सी माया? कौन सी रिद्ध?
कैसे मन की भ्रान्ति नशाय? गुरु गुसाई कहे समझाय।१०३।।

भावार्थ—हे गुरु! समाधि क्या है? सिद्ध कौन है? कौन सी माया है? कौन अक्षय रिद्ध है? मन की भ्रान्ति निवृति कैसे हो?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! श्रुति सो साधक शब्द सो सिद्ध, आप सो माया पर सो रिद्ध।
दशों को मेट भ्रान्ति नशाय, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।१०४।।

भावार्थ—हे शिष्य! अन्तरवृति समाधि है, वेद—गुरु वाक्य शब्द स्वतः सिद्ध है। आप लय रूप हैं, वाणी रिद्धि स्वरूप है। पांच (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) वैरी तथा पांच कलेश (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश) इन दशों के निवृत्ति से भ्रान्ति नामक संशय की निवृत्ति होती है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन सो सांच? कौन सो रङ्ग? कौन अभूषण चढ़े सुरङ्ग? तामे निश्चल कैसे रहे, सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।१०५।।

भावार्थ—हे गुरु! सांचा कौन है? जिसमें ढलने वाला द्रव कौन है? कैसा आभूषण है? जिस पर सदैव रंग की कसौटी चढ़े?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! ज्ञान सो सांच प्राण सो रङ्ग, जत आभूषण चढ़े सुरङ्ग। तामे निश्चल उनमन रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।१०६।।

भावार्थ—हे अवधू! ज्ञान स्वरूप द्रव (सांचे) में प्राण द्रव्य पदार्थ ढलता है तब साधक की त्राटक प्रोढ़ावस्था में ज्योति के दर्शन होते हैं वही ज्योति अनमोल गहना है जो कसौटी (परख) पर चढ़ने योग्य है, उसमें निश्चय कर निश्चल होकर रहे।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन सो मन्दिर? कौन सो देव? कहाँ बैठकर कीजै सेव? कौन पाती? केहि विधि रहे, सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।१०७।।

भावार्थ—हे गुरु! साधक के लिए कौन सा मन्दिर है? कौन सा देव है? कहां बैठकर सेवा करे? कौन पाती भेंट में चढ़ावे?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! शून्य सो मन्दिर मन सो देव, बैठ निरन्तर कीजै सेव।
पांचों पाती मन उनमन रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।१०८।

भावार्थ—हे साधक! श्रेष्ठ मन्दिर शरीर है, इसमें निवासी चैतन्यात्मा ही श्रेष्ठ देवता है, मनन तालाब के किनारे बैठकर उपासना करनी चाहिये, प्रेम पुष्प—पाती चढ़ाकर आनन्द—मग्न रहना चाहिये।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कवन सो मन्दिर? कौन सो द्वार?
कौन सी मूरति? कौन सो अपार?
कौन मन से उनमन रहे, सतगुरु होय सो बुझाए कहे।१०९॥

भावार्थ—हे गुरु! सिद्धावस्था में कौन मंदिर है? कौन द्वार देवता? कौन मूरति जो अपार है, किसकी उपासना करके निरभय रहे?

मत्स्येन्द्र उवाच :—

अवधू! शून्य से मन्दिर, शब्द सो द्वार,
ज्योति सो सुर्ति ज्वाला अपार।
अरूप रूप मन उनमन रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।११०॥

भावार्थ—हे शिष्य! सिद्धावस्था में शून्य ही विशाल मन्दिर है, ओमकार शब्द ही धनिक द्वार देवता है। त्राटक साध्य ज्योति ही साक्षात दृश्य मूर्ति तथा अपार तेजस्वी है, माया उपाधि रूप स्थल—रहित आत्मा में निर्भय रहना होता है।

गोरक्ष उवाच :—

ॐ गुरुजी! कौन दीवा? कौन प्रकाश? कौन सो वाती? कौन निवास?
कैसे दीवा अविचल रहे? सतगुरु होय सो बुझाय कहे।१११॥

भावार्थ–हे गुरु! दीपक कौन है? प्रकाश कैसे है? बाती क्या है, तेल क्या है? इसके होते भी दीपक अटल कैसे रहे?

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! ज्ञान सो दीवा, शब्द प्रकाश, सन्तोष वाती तेल निवास।
द्विविध मेट अखण्डित रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।११२।।

भावार्थ–हे शिष्य! ज्ञान दीपक का शाब्दिक प्रकाश, सन्तोष तेल में प्रेम की धारा बाती लगी रहे। दुविधा (द्वन्द) की वायु से वंचित करके लौ को अखण्डित रखे।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कौन बैठे? कौन चले, कौन फिरे? कौन मिले?
कौन घर में निर्भर रहे, सतगुरु होय सो बुझाय कहे।।११३।।

भावार्थ–हे गुरु! साधक अवस्था में क्या बैठा है? क्या चल्या? क्या फिरया? क्या मिल्या और कौन घर में निर्भय रहे?

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! बैठे धीरज, चलै विकार, सुरती फिरे, मिलै संसार।
सदा अतीत घर निर्भय रहे, ऐसा विचार मत्स्येन्द्र कहे।।११४।।

भावार्थ–हे शिष्य! धैर्य बैठा है, विकार चले गये अन्तैदृष्टा सुरति से चौदह लोकों के पिण्ड–ब्रह्माण्ड ज्ञान का विचार करना ही फिरना है, जिससे तत्व ज्ञान रमज मिली सबसे एकान्त (अतीत) होकर निर्भय रहना।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरूजी! कौन सो योगी? कैसे रहे? कौन सो भोगी कैसे लहे?
सुखस में उपजै कैसे पीर? कैसे होय बंधावै धीर?।।११५।।

भावार्थ–हे गुरु! वस्तुत: योगी कौन है? कैसे रहता है? कैसा भोग भोगता है? कैस सुख पाता है?

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! मन सो योगी उनमन रहे, उपजै महारस सब सुख लहे।
रस हि मांहि अखण्डित पीर, सतगुरु हो बँधावै धीर।।११६।।

भावार्थ–हे शिष्य! मन रूपी जोगी ध्येयस्त मौन से रहता है, मूर्द्धा–ध्यान के महारस शब्द–अनहद बाजा सुनकर अखण्डित आनन्द में रहता है, ऐसा परमानन्द साधन युक्ति द्वारा सतगुरु ही दरशाते हैं।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! कौन सो आत्मा आवै जाय? कौन सो आत्मा शून्य समाय?
कौन सो आत्मा त्रिभुवन थीर? कौन परचै बावन वीर।।११७।।

भावार्थ–हे गुरु! आने जाने वाली आत्मा कौन सी है? शून्य–विभु में विलय होने वाली आत्मा कौन सी है, तीनों लोकों का प्रेम रस लेने वाली कौन सी आत्मा है? किसकी शक्ति–साधना बावन (अनेकों) बार प्रदर्शित होती है?

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! पवन सो आत्मा आवै जाय, मन सो आत्मा शून्य समाय।
ज्ञान सो आत्मा त्रिभुवन थीर, शब्द परचै बावन वीर।।११८।।

भावार्थ–हे शिष्य! वायु अंश प्राणात्मा आती जाती है, मननशील आत्मा शून्य में विलय हो जाती है विशेष अध्यात्म–ज्ञान आत्मा तीनों लोकों में व्यापक रस है। गुरु की महिमा–शक्ति ही बारम्बार उद्यत रहती है।

गोरक्ष उवाच :–

ॐ गुरुजी! मनका कौन जीव? जीव का कौन आधार?
आधार का कौन विश्वास? ब्रह्म का कौन रूप?।।११९।।

भावार्थ–हे गुरु! मन का चैतन्य जीव कौन है, उस जीव का निवास कहां है? उस विश्वास का आवास का आधार क्या है और उस आधार का स्वरूप क्या है?

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! मन का पवन जीव, पवन का शून्य आधार।
शून्य का ब्रह्म विश्वास, ब्रह्म का अचेतन रूप।।१२०।।

भावार्थ–हे शिष्य! मन का जीव (शक्ति) प्राण है, प्राण का शून्याकाश में निवास है शून्य का आधार ब्रह्म है ब्रह्म का स्वरूप अचिन्तनीय है।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

ॐ गुरुजी! कौन चक्र थिर होय कन्ध? कौन चक्र अगोचर बन्ध?
कौन चक्रमे हंस निरोध? कौन चक्रमे चित्त परमोध?
कौन चक्रमें लहे सवाद? कौन चक्रमे लग समाध?।।१२१।।

भावार्थ–हे गुरु! किस चक्र की साधना से कुंडलनी शक्ति की जाग्रती होती है? किस चक्र से तीनों यौगिक क्रिया बन्ध सिद्धि होती है? किस चक्र में प्राण–हंस अवरूध होती? किस चक्र में मन को शिक्षा मिलती है? किस चक्र में काल गति रुकती है? किस चक्र में समाधि का परिपक्व धारणा बनती है।

मत्स्येन्द्र उवाच :–

अवधू! मूल चक्र थिर होय कन्ध, गुदा चक्र अगोचर बन्ध।
मन चक्रमे हंस निरोधे, अनहद चक्रमे चित्त परमोध।

वसुधा चक्रमे लहे सवाद, चन्द्र चक्रमे लगे समाध।
षट् चक्र का जाने भेव, आप की कर्ता आप ही देव।
मन पवन साधन्ते योगी, काया पलटन्त रहे निरोगी।।१२२।।

भावार्थ–हे शिष्य! मूलाधार चक्र से नागनि जाग्रत होती है, मूलबन्ध से ही मूल, जालन्धर, उडियान बन्ध की सिद्धि होती है तथा मणिपूर चक्र से प्राण वायु वश होता है, अनाहत चक्र से मन की शिक्षा, विशुद्ध चक्र में जराव्याधि मृत्यु भय निवारण होकर चन्द्र चक्र में समाधि धारण होती है इन षट चक्रों का भेद पहिचानने साधने वाला योगी अद्वेत निष्ठ मुक्तात्मा होता है। शरीर के रहते आरोग्य अवृद्ध सबल रहे।

।। इति श्री गोरक्षनाथ जी का गोरक्षबोध सम्पूर्णम्।।

छः जतियों का शब्द

ॐ गुरुजी आज हमारे घर आनन्द वरत्या हो जी। सिद्धो जती सतियों का दर्शन पाया हो जी। दर्शन पाया अलष ध्यानी ध्याया हो जी। दर्शन पाया अमर हो गई काया हो जी।टेक।। पहिला जती शिव शङ्कर जन्म्या हो जी। जती स्वामी कार्तिक नाम धराया हो जी। दूध उगल माता गौरां आगे धरिया माता गौरां का भरम मिटाया हो जी। आज हमारे० पूर्ववत्०।१।। दूसरा जती राजा दशरथ घर जन्म्या हो जी। जती लक्ष्मण नाम धराया हो जी। बारह वर्ष वन खण्ड तप कीना हो जी। राजा रामचन्द्र पार न पाया हो जी। आज हमारे० पूर्ववत्०।।२।। तीसरा जती माता अञ्जनी घर जन्म्या हो जी। जती बीर बंकनाथ नाम धराया हो जी।

लंकनी मार लंका जाय पहुंचे हो जी। माता सीता जी की खबर ल्याया हो जी। आज हमारे० पूर्ववत्०।।३।। चौथा जती वेदव्यास घर जन्म्या हो जी। जती शुकदेव नाम धराया हो जी। बारह वर्ष गर्भ योनि में तप कीना हो जी। शिव के वचनां से बाहिर आया हो जी। आज हमारे० पूर्ववत्०।।४।। पांचवां जती पारस घर जन्म्या हो जी। जती गरुड़देव नाम धराया हो जी। अष्ट कुली नाग भस्म जो कीना। इक कुली नाग बचाया हो जी। आज हमारे० पूर्ववत्०।।५।। छटवां जती गुरु गोरक्षनाथ कहिये हो जी। जिन्हा साढ़े बारह पंथ चलाया हो जी। यह तो गर्भ योनि नहीं आया हो जी। निनानवें करोड़ राजा योगी जो कीना हो जी। इनकी प्रजा का अन्त न पाया हो जी। आज हमारे० पूर्ववत्०।।६।। सातवां जती नर नारायण कहिये हो जी। जिसने मठ मूलथान थपाया हो जी। रघुपति जुगपति जमला जगाया हो जी। सिद्ध मेहरनाथ यश गाया हो जी। आज हमारे० पूर्ववत्०।।७।।

शिवाष्टक

जय शिव शङ्कर जय गङ्गाधर करुणाकर करतार हरे।
जय कैलाशी जय अविनाशी सुखराशी सुखसार हरे।
जय शशि शेखर जय डमरु धर जय प्रेमगार हरे।
जय त्रिपुरारी जय मद हारी अमित अनन्त अपार हरे।
निर्गुण जय जय सगुण अनामय निराकार साकार हरे।
पार्वती पति हर हर शम्भो पाहि पाहि दातार हरे।।१।।
जय रामेश्वर जय नागेश्वर वैद्यनाथ केदार हरे।
मल्लिकार्जुन सोमनाथ जय महाकाल ओंकार हरे।

त्र्यम्बकेश्वर जय घुष्मेश्वर भीमेश्वर जगतार हरे।
काशीपति श्री विश्वनाथ जय मंगल मय्र अघहार हरे।
नीलकंठ जय भूतनाथ जय मृत्युञ्जय अविकार हरे।
पार्वती पति हर हर शम्भो पाहि पाहि दातार हरे।।२।।
जय महेश जय जय भवेश जय आदिदेव महादेव विभो।
किस मुख से हे गुणातीत प्रभु तब अपार गुण वर्णन हो।
जय भवकारक तारक हारक पातक दारक शिव शम्भो।
विपद विदारण अधम उधारण सत्य सनातन शिव शम्भो।
सहज वचन हर जलज नयनवर धवल वर्ण तन शिव शम्भो।
मदन कदन कर पाप हरण हर चरण मनन धन शिव शम्भो।
विवसन विश्वरूप प्रलयङ्कर जग के मूलाधार हरे।
पार्वती पति हर हर शम्भो पाहि पाहि दातार हरे।
भोलानाथ कृपालु दयामय औढ़र दानी शिव योगी।
निमिष मात्र में दे देते हैं नवनिधि मनमानी शिव योगी।
सरल हृदय अति करूणा सागर अकथ कहानी शिव योगी।
स्वयं अकिंचन जन मन रंजन पर शिव परम उदार हरे।
पार्वती पति हर हर शम्भो पाहि पाहि दातार हरे।।५।।
आशुतोष इस सोहमयी निद्रा से मुझे जगा देना।
विषम वेदना से विषयों की माया धीश छुड़ा देना।
रूप सुधा की एक बून्द से जीवन मुक्त बना देना।
दिव्य ज्ञान भण्डार युगल चरणों की लगन लगा देना।
एक बार इस मन मन्दिर में कीजे पद संचार हरे।
पार्वती पति हर हर शम्भो पाहि पाहि दातार हरे।।६।।
दानी हो दो भिक्षा में अपनी अनपायनि भक्ती प्रभो।
शक्तिगान हो दो अविचल निष्काम प्रेम की शक्ति प्रभो।

त्यागी हो दो इस आसार संसार से पूर्ण विरक्ति प्रभो।
परम पिता हो दो तुम अपनी चरणों में अनुरक्ति प्रभो।
स्वामी हो निज सेवक की सुन लेना करूण पुकार हरे।
पार्वती पति हर हर शम्भो पाहि पाहि दातार हरे।।७।।
तुम बिन व्याकुल हूं प्राणेश्वर आ जाओ भगवन्त हरे।
चरण शरण की बाँह गहो हे उमा रमण प्रिय कन्त हरे।
विरह व्यथित हूँ दीन दुखी हूं दीन दयाल अनन्त हरे।
आओ तुम मेरे हो जाओ आ जावो श्री मन्त हरे।
मेरी इस दयनीय दशा पर कुछ तो करो विचार हरे।
पार्वती पति हर हर शम्भो पाहि पाहि दातार हरे।।८।।

द्वादश ज्योतिर्लिंग आरती

प्रथमे सौराष्ट्र सोमनाथ नित्य दर्शन दीजे।
सोई २ मुनीन्द्र सदाशिव मलकार्जुन बीजे।। ३ॐ हर ३ महादेव
तीसरे शिव केदार गंगोत्री विराजे।
चौथे शिव ३ॐकार कावेरी तट राजे।। ३ॐ हर ३ महादेव
पांचवें शिव पूर्व वैद्यनाथ बन खण्डी।
छटे शिव नागेश्वर ध्यान धरे दण्डी।। ३ॐ हर ३ महादेव
सांतवें शिव दीन दयालु विश्वेश्वर काशी।
आठवें शिव महंकाल उज्जैन के दासी।। ३ॐ हर ३ महादेव
नवमें भीमा शङ्कर भक्ति अविचल गावे।
दसवें शिव दक्षिण रामेश्वर कहलावे।। ३ॐ हर ३ महादेव

घुष्मेश्वर गुण ज्ञान के आज्ञा दश ज्योति।
द्वादश त्र्यम्बकनाथ गुरुमुख ल्यो ज्योति।। ॐ हर ३ महादेव
ज्योति लिङ्ग की पूजार्ति निशदिन जो गावे।
वर्णी राजाराम चन्द्रयोगी मन इच्छा फल पावे।। ॐ हर ३ महादेव

❋

भगवान शिव शङ्कर की आरती

जय शिव ओंकारा हर शिव ओंकारा।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव अर्धङ्गी गौरां।।१।। ॐ हर ३ महादेव
एकानन चतुरानन पंचानन राजे।
हंसानन गरुड़ासन वृषवाहन साजे।।२।। ॐ हर ३ महादेव
दो भुज चार चतुर्भुज अष्ट भुज तुम सोहे।
तीनों रूप निरखता त्रिभुवन जग मोहे।।३।। ॐ हर ३ महादेव
श्वेताम्बर पीताम्बर बाघम्बर अंगे।
सनकादिक ब्रह्मादिक भूतादिक संगे।।४।। ॐ हर ३ महादेव
अक्षमाला बनमाला रुण्डमाला धारी।
चन्दन मृगमद लेपन भाले शशि धारी।।५।। ॐ हर ३ महादेव
कर मध्ये सुकमण्डल चक्र त्रिशूल धरता।
दुंःख हरता सुख करता युग पालन करता।।६।। ॐ हर ३ महादेव
शिवजी के हाथों में कंगन कानों में कुण्डल गल मुण्डन माला।
जटा में गङ्ग विराजत ओढ़त मृगछाला।।७।। ॐ हर ३ महादेव
सावित्री वर ब्रह्मा लक्ष्मी वर विष्णु।
अर्धरङ्गी बहुरंगी शिव गौरां संगी।।८।। ॐ हर ३ महादेव

ब्रह्मा विष्णु सदाशिव तीनों एक स्वरूप अन्तर नहीं करना।
हर २ जपते ब्रह्मा शिव २ रटते विष्णु भवसागर तरना।।९।ॐ हर ३ महादेव
सचिदानन्द स्वरूपा त्रिभुवन के राजा।
चारों वेद उच्चारत अनहद के बाजा।।१०।। ॐ हर ३ महादेव
पार्वती पर्वत में बस रही शङ्कर कैलाशा।
आक धतूरे का भोजन भस्मी में वासा।।११।। ॐ हर ३ महादेव
चौसठ योगनी मङ्गल गावत नृत्य करत भैरो।
बाजत ताल मृदंगा और बाजत डमरू।।१२।। ॐ हर ३ महादेव
काशी में विश्वनाथ विराजे नन्दा ब्रह्मचारी।
नित्य उठ भोग लगावत महिमा अति भारी।।१३।। ॐ हर ३ महादेव
शिवजी की संध्या आरती निशदिन जो गावे।
कहत शिवानन्द स्वामी मनवांछित फल पावे।।१४।। ॐ हर ३ महादेव

भैरव वन्दना

कृत्वा पान सुरा सुरक्त नयनः भाले लसच्चन्द्रिका।
श्वाना सीन त्रिशूल दण्ड सुकरे नग्नः कपाली तथा।
कर्णौ कुण्डल शोभितौ घृरिबसत् द्वारस्य संरक्षकः।
वन्दे भैरव भूतनाथ बटुकं नाथादि नाथं पुरः ।।१।।
विभ्रच्चन्द्र कला ललाट पटले कर्णे तथा कुण्डलम्।
हस्ते कङ्कण काञ्चनं कटि लसत् व्याघ्रा जिनं सुन्दरम्।
पाणौ शूल कपाल मत्त सुरया द्वारेऽभव द्रक्षकः।
श्वानारुढ़ कराल काल शमनं वन्दे महा भैरवम् ।।२।।

चन्दन चर्चित यत्त्रिपुण्ड्र पटले भाले विशालं तथा।
कौपीना जिन धारिणं कटि तटे दण्डं कपालं तथा।
हस्ते भैरव नाथ आस्य कमले पात्रं सुरा पानपे।
नित्यं श्वान समेत भक्त मभयं ददतंनमामो वयम् ॥३॥
कर सुदृढ़ कपालं धारयित्वा त्रिशूलं।
पिवति मधुर हालां माट्टहासं करोति।
अखिल मम रिपूणां नष्ट कर्तु त्वमेव।
विपुल बल निधानो भूतनाथः सदात्वम् ॥४॥

❋

भैरवाष्टम्

श्री भैरवो रुद्र महेश्वरो यो महाकाल अधीश्वरोऽस्थ।
यो जीव नाथोऽत्र विराजमानः श्री भैरवं तं शरणं प्रपद्ये ॥१॥
पद्मासना सीत मपूर्वरुपं महेन्द्र चर्मोपरि शोभमानम्।
गदाऽब्ज पाशान्वित–चक्र चिन्हम् श्री भैरवं पूर्ववत् ॥२॥
यो रक्त–गौरश्च चतुर्भुजश्च पुरः स्थितोद्भासित पानपात्रः।
भुजंग भूयोऽमित विक्रमोयः श्री भैरवं पूर्ववत ॥३॥
रुद्राक्षमाला–कलिकाङ्गरूपं त्रिपुण्ड युक्तं शशिभाल शुभ्रम्।
जटाधरं श्वानवरं महान्तं श्री भैरवं पूर्ववत् ॥४॥
योदेव देवोऽस्ति परः पवित्रः भुक्तिञ्च मुक्तिञ्च ददादि नित्यम्।
योऽनन्त रुपः सुखदो जनानां श्री भैरवं पूर्ववत् ॥५॥
यो बिन्दुनाथोऽखिल नादनाथः श्री भैरवी चक्रप–नागनाथः।
महाद्भूतो भूतपतिः परेशं श्री भैरवं पूर्ववत् ॥६॥

यो योगिनो ध्यान परः नितान्तं स्वान्तः स्थमीशं जगदीश्वरं वै।
पश्यन्यि पारं भव सागरस्थ श्री भैरवं पूर्ववत् ।।७।।
धर्मध्वजं शङ्कररूप मेकं शरण्यमित्थं भुवनेषु सिद्धम्।
द्विजेन्द्र पूज्यं विमलं त्रिनेत्रं श्री भैरवं पूर्ववत् ।।८।।
भैरवाष्टक मेतद् यः श्रद्धा–भक्ति–समवितः।
सायं प्रातः पठेन्नित्यं स यशस्वी सुखी भवेत् ।।९।।

भैरव चालीसा

दोहा– भैरवनाथ के चरण को कोटि–कोटि आदेश।
जिनकी कृपा से टरत है भव बन्धन के क्लेश।।

।। चौपाई ।।

जय श्री भैरव नाथ निरञ्जन, भव तारण भव भय भञ्जन।
रुद्र रूप से आप सुहावै, आदि नाथ के अंश कहावे।
शीश जटा अति सुन्दर कारी, कानन कुण्डल की छबि न्यारी।
गले में सेली नाद विराजे, कर त्रिशूल खप्पर अति छाजै।
तन पर सुन्दर भस्म लगावे, डिमक डिकम डिम डमरू बजावै।
चौसठ योगिनी बावन बीरा, भैरव नाम जपत रणधीरा।
सुर नर मुनि सब ध्यान लगावै, नारद शारद मिल गुण गावै।
शिव अपमान सहन नहीं कीन्हा, सृष्टि पति को शिक्षा दीन्हा।
ब्रह्म हत्या से चले लिवाई, आदि नाथ की आयु पाई।
चौदह लोक फिरे तुम नाथा, ब्रह्म हत्या नहीं छोड़े साथा।
काशी जाकर गंग नहाये, ब्रह्म हत्या को शीघ्र भगाये।

काशी के कोतवाल कहाये, प्रेमी जन के मन को भाये।
यतियों में भी नाम तुम्हारा, निज भक्तों को पल में तारा।
योगी जन के तुम रखवारे, योगियों के तुम प्राण प्यारे।
योग युक्ति है तुमको प्यारी, योगियों की करते रखवारी।
भैरव नाथ अनाथ के स्वामी, रूप अनेक नाम बहु नामी।
दीनन के प्रभु तुम हितकारी, धीर गम्भीर श्रेष्ठ मति धारी।
देवन के सब काज सुधारे, दानव दैत्य को मार विदारे।
रूप अनेक जगत में धारे, भैरव अष्ट अति भये सुखारे।
अकथ अथाह आपकी शक्ति, जानो श्रेष्ठ योग की युक्ति।
भक्तन के तुम होत सहाई, योगी जन के हो सुखदाई।
जो जन तुमसे ध्यान लगावै, सब सुख भोग अमर पद पावै।
भैरव नाम जो जपत हमेशा, होय अभय मिट जाये कलेशा।
भैरव नाम की महिमा भारी, जपै जो नर पावै फल चारी।
भैरव नाम जो नर उच्चरिहैं, सहजहि में भव सिन्धु तरिहैं।
काम क्रोध नहीं उसे सतावै, जो भैरव का दास कहावै।
काल बलि भी अति डर पावै, भैरव भक्त के पास न जावै।
भैरव नाम जहां होत उचारा, भूतादिक गण भागत सारा।
डंकनी शंखनी निकट न आवै, भैरव नाम का रट जो लावै।
सुर नर मुनि गन्धर्व पुकारै, नित्त भैरव का नाम उच्चारै।
पुत्र हीन नर करे जो सेवा, पूरे इच्छा भैरव देवा।
रोगी हो जो पाठ सुनावै, कर स्नान चालीसा गावै।
चालीस पाठ करे नित जोई, मनोकामना पूर्ण होई।
रोट लंगोट से भोग लगावै, करे धूप और ज्योति जगावै।
रविवार दिन श्रेष्ट कहावै, कर पूजा भैरव को मनावै।
भैरव देव अति बलकारी, सेवक की करते रखवारी।

जो इच्छा होय मन मांही, भैरव कृपा से दुर्लभ नांही।
करो कृपा मो पर गुरु ज्ञानी, निश दिन नाम जपै मम बानी।
महिमा आपकी अति घनेरी, कहि न सकौं मन्द मति मेरी।
नाथ त्रिलोकी हैं शरण तुम्हारी, करो कृपा हरो विपत हमारी।

दोहा–भैरव चालीसा पढ़े, भाव धरि जन कोई।
भैरव नाथ कृपा करें, मनवांछित फल होई।।

❋

भैरवनाथ जी की आरती

जय भैरव स्वामी, प्रभु जय भैरव स्वामी।
करत कृपा निज जन पर, तुम अन्तर्यामी।।जय भैरव स्वामी।।१।।
शीश जटा अति सुन्दर, गल पुष्पन माला।
कानन कुण्डल साजै, कटि में नाग काला।।जय भैरव स्वामी।।२।।
हाथ त्रिशूल सुशोभित, तन भस्मी धारी।
डमरु नाद बजावत, ध्वनि मंगल कारी।।जय भैरव स्वामी।।३।।
भैरव भयहर नाम तुम्हारा, अति मंगलकारी।
सब देवन में देव बली हो, सबके हितकारी।।जय भैरव स्वामी।।४।।
भैरव शक्ति तुम्हारी, भक्तों के रखवारे।
नाम तुम्हारा, सबके काटत फन्द सारे।।जय भैरव स्वामी।।५।।
ब्रह्मा विष्णु सुरेशा, तुम्हरों गुण गावे।
नारद शारद सब मिल, ध्यान सदा लावे।।जय भैरव स्वामी।।६।।
काशी के कोतवाल तुम्हीं, प्रभु मुक्ति के दाता।
तुम्हारा ध्यान धरे जो, भव से तर जाता।।जय भैरव स्वामी।।७।।
भैरव नाथ की आरती, निश दिन जो गावे।
विनवत बाल त्रिलोकी, मुक्ति फल पावे।।जय भैरव स्वामी।।८।।

भैरव नाथ स्तुति

तर्ज–भये प्रगट कृपाला दीन दयाला

भैरव बलकारी आनन्द कारी, गल पुष्पन की माला।
शिर जः सुहावनी अति मन भावनी, लोचन दृष्टि रसाला।
कर्ण कुण्डल शोभित भस्मी भूषित, कटि में नाग शुभ काला।
हम शरण तुम्हारी करो रखवारी, भैरव नाथ दयाला ॥१॥
कर खप्पर छाजै डमरु बाजै, सोहे शस्त्र विशाला।
प्रेतादिक कंपै काल न झंपै, डरपत नर भूपाला।
सुर नर गुण गावे शीस नवावे, महिमा रूप निराला।
हम शरण तुम्हारी करो रखवारी, भैरव नाथ दयाला॥२॥
अधम उधारन दुष्ट विदारण, सन्तन के रखवाला।
जो नाम उच्चारे भये सुखारे, अभय उन्हें कर डाला।
प्रभु पतित पावन पाप नशावन, तुम हो देव भयाला।
हम शरण तुम्हारी करो रखवारी, भैरव नाथ दयाला॥३॥
सुन्दर तन्न भेषा नमत सुरेशा, गुण गावत है नृपाला
जो शरण में आया शिष्य बनाया, जरा मरण भय टाला।
तुम सबके स्वामी अन्तर्यामी, भैरव देव भुवाला।
हम शरण तुम्हारी करो रखवारी, भैरव नाथ दयाला॥४॥
करिये प्रभु दाया शुभ हस्त छाया, करो त्रिलोक निहाला।
हरिये मम विपदा कृपा निकेता, भैरव देव कृपाला।
यह स्तुति गावै सब सुख पावै, मिल शीघ्र फल आला।
हम शरण तुम्हारी करो रखवारी, भैरव नाथ दयाला॥५॥

❋

काल भैरव बीज मन्त्र

ॐ हूं खों जं रं लं बं क्रों ऐं ह्रीं महा काल भैरव सर्व विघ्न नाशाय ह्रीं फट् स्वाहा।

।। श्री भैरवनाथावतार कथा।।

ब्रह्मा जी बोले कि हे नारद! अब भैरव के अवतार का वर्णन करते हैं। एक दिन स्कन्द जी के पास कुम्भज मुनि जाकर कहने लगे कि आप मुझे भैरव चरित्र सुनाइये। हमने बहुतों से भैरव जी के अनेक चरित्र सुने हैं यह भी श्रवण किया है! कि वे काशी के कोतवाल हैं! उनसे सब संसार व काल तक डरता है। एक तो भैरव भूतों में भी हैं! जिनके अधीन सर्व योगिनीगण हैं! और जो सर्व संसार की भयानक दृष्टि आवे उनका नाम भी भैरव है! इन्हीं भैरव में वे भी हैं! या और कोई भैरव हैं। भैरव कब और किस कार्य के निमित्त उपजे थे यह सब वृतान्त आप मुझे सुनायें। यह बात कुम्भज मुनि से सुनकर स्कन्द बोले कि भैरव सदा शिवजी के पूर्ण रूप हैं न तो वे भूतों में हैं और न भयानक में वे तो आप ही सदा शिव हैं जिनको मूर्ख लोग नहीं जानते किन्तु ब्रह्मा और विष्णु जी भी इनकी महिमा नहीं जानते नारद, शारदा और देवता मुनि आदि उनका पार नहीं पा सकते हैं यह कुछ अचरज की बात नहीं है। वरन् शिवजी की माया को कोई नहीं जान सकता। पर हाँ जिनके ऊपर शिव कृपा करें उनके सामने माया नहीं आ सकती। एक समय सब देवता मुनि इकट्ठे बैठकर विचार करने लगे कि सृष्टि में कौन प्रभु है

यद्यपि बहुत विचार किया पर कुछ न जाना तब तो सब चिन्तित होकर कहने लगे कि चलो सुमेरु पर्वत पर चलकर ब्रह्मा से पूछें वे मूल बतायेंगे निदान ऐसा ही किया और मुझसे स्तुति के अनन्तर पूछा कि महाराज आप बतावें कि ब्रह्मा कौन हैं और कौन दोषों से रहित अविनाश सबके मन को जानने वाले निर्गुण, सगुण, सर्व संसार के स्वामी, विश्वम्भर, प्रलयकाल, जिनकी आज्ञा से तुम भी प्रजा को रचते हो और विष्णु उन्हीं की आज्ञा से पालन करते हैं, हर प्रलय करते हैं और जिनके भय से शेष पृथ्वी को धारे हुये हैं जिनकी आज्ञा से चन्द्रमा, तारागणों समेत आकाश में प्रकट होते हैं उनको बताइये इतना सुन हमने कहा कि हे देवताओं वे हम ही हैं। हमारे नामों को सुनकर तुम आप ही समझ लो कि परब्रह्म हम ही हैं और कोई हम को ब्रह्मा, स्वयम्भू, अज, परमेष्ठी आदि बोलते हैं यह कहकर स्कन्द जी बोले देखो ब्रह्माजी शिव की माया से क्यों कर मोह कर अपने को परब्रह्म वर्णन करने लगे। शङ्कर जी की माया अति बलवती है यह वार्ता हो रही थी कि विष्णु जी उत्तमोत्तम चतुर्भुजी स्वरूप धारण किये पीताम्बर ओढ़े क्रोध से नेत्र रक्त किये प्रकट हुये उन्होंने देवताओं से कहा कि देखो ब्रह्मा की मूर्खता यह ऐसे मूर्ख वचन क्यों कहता है। हे ब्रह्मा! तुम वेद पुराण के विरूद्ध ऐसी बात क्यों करते हो हमारे नाभिकमल से उपजे हो, तुम्हारी बड़ाई हमारे अधीन हैं और तुम हमारी आज्ञा से सृष्टि रचते हो हम सब तुम्हारे कामों में सहायता करते हैं और तुम सर्व सृष्टि को उपजा कर उनकी रक्षा में प्रवृत्त रहते हो हम पृथ्वी का भार उतारते हैं। हम परम ज्योति और परब्रह्म हैं, हम परमात्मा निर्गुण निर्दोष हैं और हर प्राणी में प्रकट हो रहे हैं मेरे

विरूद्ध होना मानों अपने जीव से हाथ धोना है। हम यज्ञ पुरूष हैं हमसे बड़ा कोई संसार में नहीं । वेद ने हमको ब्रह्म करके बखाना है। तुम अपने नाम पर गर्व मत करो सत्य सत्य कहो निदान इसी प्रकार ब्रह्मा और विष्णु ने बहुत विवाद किया और शिव जी को किसी ने कुछ न जानकर आप ही आप ब्रह्म ठहराया।

दूसरा अध्याय

ब्रह्मा जी बोले हे नारद! अन्त को यह बात ठहरी कि वेद जिसको परमहंस कह देवें वही परब्रह्म माना जावे और वेदों का पूरा निर्णय समझा जावे सो इसी प्रयोजन से ब्रह्मा और विष्णु ने वेदों को बुलाकर अति नम्रता से कहा कि हे वेदों संसार में तुम्हारे वचन पर सबका पूर्ण विश्वास है तुम यह बतलाओ कि परब्रह्म कौन है यह सुनकर वेद बोले कि जो तुमने हम पर इस बात को रक्खा तो हम सत्य ही सत्य कहेंगे जिससे तुम्हारे मनों का संशय दूर हो जायेगा। पहिले ऋग्वेद ने कहा कि जहां सर्व जीवधारी स्थित रहते हैं और करोड़ों ब्रह्माण्ड दिखाई पड़ते हैं जिनको वेद परमतत्व कहकर वर्णन करता है और जिनको सबों ने सबसे श्रेष्ठ ठहराया है वे सदा शिव ही हैं जो प्रलय में भी नष्ट नहीं होते यह कहकर ऋग्वेद चुप हो रहा। यजुर्वेद बोला कि जिनको सर्व जीव यज्ञ करके सेवन करते है जो परमानन्द स्वरूप हैं और जिनका ध्यान योगी अन्त में करते हैं और बिना उनकी इच्छा के दर्शन प्राप्त नहीं कर सकते और जिनका हम नेति–नेति वर्णन करते हैं वे शुद्ध सदा शिव हैं। फिर सामवेद ने कहा कि जिससे तीन लोक प्रकट होते हैं और जिनको योगी अति विचार से समझते और

जिनके अंश से उत्पत्ति करने वाला, पालन करने वाला और प्रलय करने वाला है वह केवल सदा शिव हैं। फिर अथर्ववेद बोले कि जिसको परब्रह्म वर्णन करते हैं उनकी भक्ति करके उनका यश गाते रहते हैं जो केवल आप ही मुक्ति देने वाले हैं। वह सदा शिव हैं। यह वचन वेद के सुनकर दोनों देवता बहुत हँसने लगे और शिव की माया से मोहित होकर कहने लगे कि योगियों का पति, कुरूप, जटा धारण करने वाला, विष खाने वाला, नग्न शरीर, बैल पर चढ़ने वाला, जिसके भूषण सर्प हैं श्मशान की भस्म शरीर में मर्दन कर भूतों की सङ्गति में रहता है वह परब्रह्म क्यों कर हो सकता है जिसकी सङ्गति से सबको ग्लानि है। यह कह कर दोनों हास्य करने लगे तब तो प्रणव ने कहा कि हे सृष्टि के उपजाने वाले और पालन करने वाले विष्णु हमारी बात मन लगाकर सुनो—तुम तीनों लोक के उपदेष्टा विश्वासित हो। वेद मत का खण्डन मत करो। वेदों ने सत्य ही कहा है परम शिव की कुछ रूपरेखा नहीं है। पर वे तीनों लोक में नाना प्रकार की लीला करते हैं। तुम्हारे लिए उन्होंने स्वरूप धारण किया है। वे तीनों लोक के अन्तरयामी हैं। वे तुम्हारी विनय के अनुसार ब्रह्मा के भ्रूमध्य से उपजे और उनके बहुत लीलाधारी रूप हैं। जिन्होंने अपने भक्तों के लिए बड़े—बड़े चरित्र किये हैं। हम शिव के चरित्रों के मूल का वर्णन कहते हैं जिससे तुम्हारी मति परब्रह्म के विरूद्ध न हो और अटल बुद्धि प्राप्त हो।

कहते हैं कि जब कोई जीव न था वरन् सृष्टि संसार, निर्गुण प्रकृति, पुरुष ब्रह्मा, विष्णु, वर्ण, आश्रम आदि कुछ भी न था तब केवल अद्वितीय, निर्गुण, माया से परे, ज्योति मात्र सदा शिव थे जिनकी वेद

नेति—नेति करके बखानते हैं और अहर्निश वर्णन करके फिर भी उनके भेद को नहीं जानते ऐसे निर्गुण स्वरूप शिव के नाम से विराजमान हैं वे ही अलख निरंजन स्वरूप शिवजी तीनों गुणों से श्रेष्ठ हैं जिनके अंश से तुम तीनों देवता उपजे हो उसमें शिव के पूर्ण अंश से हर हैं। तुम दोनों को उनकी सेवा करना उचित है जो और शिवजी शिवलोक में रहते हैं वही हर, रुद्र अविनाशी हैं जो शक्ति सहित अवतार लेते हैं वही शिव कैलाश में स्थित हैं। जो शक्ति रहित मृत्यु को जीते हुए दिखाई देते हैं और सब प्रकार की लीला करके भी स्वाधीन रहते हैं उनके चरित्र तो कोई जानने नहीं पाया जो उनकी इच्छा होती है वही करते हैं वे माया जाल से परे हैं, जिनके सब देवता और मुनि दास हैं जिनके चरित्रों को वेद पुराण और धर्म शास्त्र नहीं जानते तुम उनकी माया से भूलकर पशुओं के समान भटकते फिरते हो वही शिव लीलाधारी अपनी इच्छा के अनुसार बहुत से रूप धारण करते हैं, शरीर धारते, कभी शरीर रहित, कभी योगी और कभी भोगी, कभी भूतों की संगति में और कभी नग्न शरीर में भस्म लगाये सेली भूषण पहिने जटा रखाये हुये कभी परमहंसगति को दिखलाते हैं। कभी अपने में आप ही को देख कर ध्यान करते हैं, कभी चक्रवर्ती राजाओं के समान नाना प्रकार के भोग भोगते हैं और शक्ति समेत सिंहासन पर बैठकर राज्य करके प्रजा पालन करते हैं। सब देवता और दैत्य उनको प्रसन्न करके अपना—अपना मनोरथ पाते हैं उनका यश लक्ष्मी जी गाती हैं विष्णु मृदङ्ग बजाते हैं, ब्रह्मा ताल देते हैं, सरस्वती बीणा धारण करती हैं। इन्द्र बांसुरी बजाते हैं वे शिव हैं यद्यपि यह सब बातें प्रणव ने शिवजी की माया से वे सुनाई पर उन

दोनों के मन में कुछ न आया कारण यह था कि इन्हें मानते थे इतने में शिवजी ने इच्छा की कि इनका मोह दूर करना चाहिये।

तीसरा अध्याय

स्कन्द जी बोले हे कुम्भज! इतने में दोनों के बीच एक ज्योति प्रकट हुई जिसके प्रकाश से सब पृथ्वी और आकाश पूर्ण हो गया उसमें से एक सुन्दर स्वरूप उपजा जिसको देख ब्रह्मा ने पाँचवें मुख से यह कहा कि हे विष्णो! हमारे और तुम्हारे बीच में यह कैसी आश्चर्यदायक ज्योति प्रकट हुई, जिसमें किसी मनुष्य का स्वरूप भासित हुआ है कि मनुष्य नील लोहित वर्ण, चन्द्रभाल, त्रिशूल हाथ में सर्पों का भूषण धारण किये खड़ा है सो ब्रह्माजी ने कहा कि तुम वही हो जो हमारी भ्रू के मध्य से उपजे थे तुम्हारे रोने के कारण हमने तुम्हारा नाम रुद्र रक्खा था और भी बहुत से नाम रक्खे थे तुमको उचित है कि हमारी शरण में आओ हम तुम्हारी रक्षा करेंगे जबकि ब्रह्माजी ने मोहवश ढिठाई से यह वार्त्ता की तो ऐसा गर्व ब्रह्मा का देख कर शिवजी ने महा कोप किया और एक मनुष्य को उपजाया जो भक्तों को आनन्द देने वाला और शत्रुओं के लिए अति भयंकर था उसके भाल में चन्द्रमा, तीन लाल नेत्र, शरीर में सर्प लिपटे हुए थे निदान हर प्रकार से अपने समान, अपनी लीला के लिए प्रकट किया उस उपजे हुए मनुष्य ने हाथ बांध शिवजी से विनती की कि हमारा नाम रख दो और मुझे जो काम करना है वह कहो, शिवजी बोले कि तुम काल के समान भासित होते हो इससे तुम्हारा नाम कालराज हुआ और जो कि तुम विश्व के भरण की शक्ति रखते हो इससे तुम्हारा नाम भैरव भी है और जो कि तुमसे काल को भी

भय होगा इससे काल भैरव भी तुम्हारा नाम है और जो कि तुम गणों के दु:ख मिटाने वाले हो इससे अमरादिक भी तुम्हें कहेंगे और तुम भक्तों के पाप खा डालोगे इससे तुम्हारा पापभक्ष भी नाम है इस तरह और भी तुम्हारे नाम होंगे और सब भक्तों के मनोरथ तुमसे पूर्ण होंगे। अब अपना काम सुनो पद्मसुत जो ब्रह्मा है यह महाशत्रु है इसको भली भांति शिक्षा दो और इसके सिवाय और भी जो संसार में इस विधि के विरोधी हैं उनको शिक्षा दो और हमारी मुक्ति नगरी अर्थात् जो काशी है और हमको प्राण के समान प्रिय है। उसका स्वामी हमने तुमको किया तुम सदा के लिए वह स्थान अपना समझो तुम काशी के कोतवाल होकर सबको शिक्षा दोगे काशी में तुम्हारी दुहाई फिरेगी तुम वहाँ राज्य करोगे और जो मनुष्य काशी में पाप करें उनको उपदेश करो तुम्हारा तेज तीन लोक में कोई न सह सके और जो कोई काशी में शुभ—अशुभ कर्म करे उसको चित्रगुप्त नहीं लिख सकते वहाँ यमराज की आज्ञा नहीं चल सकती यह सुन काल भैरव प्रसन्न हुए और मन में सोचने लगे कि ब्रह्मा को क्या दण्ड देना चाहिए फिर विचार किया कि ब्रह्मा ने पाँचवें मुख से शिव जी की निन्दा की है उनको पुत्र बनाया है इसलिए उचित है कि उसका वही शिर काट डालूं ऐसा विचार कर भैरव क्रोधित हुये पहिले उनका स्वरूप महाभयानक हो गया और उन्होंने बांई अंगुली के नख से ब्रह्मा का पाँचवां सिर काट लिया उस समय बड़ा हाहाकार मच गया। देवता और मुनि आदि कांपने लगे और विष्णु भी हाथ जोड़ स्तुति करने लगे और ब्रह्माजी कांपकर महादु:खी हुए, शतरुद्री जप करने लगे और शिव जी की शरण में गये सो शिवजी ने कहा हे विष्णो और ब्रह्मा! कुछ भय

मत करो तुम दोनों सृष्टि के उपजाने वाले और पालनकर्त्ता हो और मैं प्रलय का करने वाला हूँ तुम मुझको अपने समान प्रिय हो हम तुम तीनों देवताओं में कुछ भेद नहीं है पर जिस मुख से ब्रह्मा ने निन्दा की केवल उसे हमने कृपा करके दण्ड दिया। हमने यह चरित्र कर तुम्हारा मोह दूर कर दिया। जब तुमने वेद पुराणों की आज्ञाओं को न समझा तो मुझको तुम्हारी भलाई के लिये प्रकट होना पड़ा इसके पीछे भैरवजी से शिवजी ने कहा कि भरणकर्त्ता भैरव! जो करना समझ बूझकर करना ब्राह्मण या साधु चाहे कैसा ही भ्रष्ट हो गया हो पर उसका वध करना महा पाप है तुमको ब्रह्मा जी के पाँचवें सिर काटने के कारण दोष लग गया है उसको दूर करो और कपालव्रत को धारण करो। यद्यपि तुमको पुण्य–पाप लगता नहीं है पर वेद के अनुसार सब करना चाहिए कि अन्य मनुष्य भी ऐसा करें। तुम सिर को हाथ में लिए हुये भिक्षाटन करते सर्व लोकों की परिक्रमा करो, यह कह कर शिव जी ने स्त्री प्रकट की जिसका शरीर बहुत बड़ा था उसका नाम ब्रह्महत्या रक्खा वह महा भयंकर और महाभय देने वाली सामग्री धारे, जिसका भयदायक रक्त शरीर, रक्त ही वस्त्र पहिने सर्व शरीर में रुधिर लगाये बड़े भयानक दांत जिसकी जिह्वा मुख से निकली हुई आकाश तक शिर उठाये हाथ में खप्पर लिये जिसमें से लहू पीती थी और प्रलयकाल के मेघ समान महाभयंकर ब्रह्महत्या को प्रकट करके उससे कहा कि काशी हमारी नगरी है वहाँ जब तक भैरव लौट न आवे तब तक उनको न छोड़ना चाहे कोई करोड़ों उपाय करे और सिवाय काशी के तुम्हारी तीनों लोक में गति होगी यह रहस्य कहकर शिव अन्तर्ध्यान हो गये और भैरव ने भी शिवजी की आज्ञा

स्वीकार की और ब्रह्मा का शिर लिये भिक्षा मांगते, ऊंचे शब्द से सबको अपना पाप जो लगा था सुनाते हुये चले यद्यपि भैरव शुद्ध थे पर संसारी मनुष्यों की शिक्षा के निमित उन्होंने ऐसा किया।

चतुर्थ अध्याय

ब्रह्माजी बोले कि–हे नारद! भैरव को ब्रह्महत्या ने न छोड़ा और वह पीछे–पीछे बड़ा शब्द करती हुई चली जहां भैरव जाते वहां वह भी, भैरव संसार भर में भ्रमण करते फिरते और सातों द्वीपों में जो–जो तीर्थ थे वह सब भैरव ने अकेले किये और साथ में वह स्त्री थी और कोई नहीं था यहाँ तक कि वह पाताल लोक तक गये। पर वह स्त्री न छूटी निदान उन्होंने ऊपर के लोकों में भी भ्रमण किया परन्तु वह न हटी इसी प्रकार भैरव ब्रह्मलोक पर्यन्त फिरे जहां भैरव शिर लेकर जाते थे वहाँ कि निवासी अन्नधन से परिपूर्ण हो जाते थे। निदान महादु:खी हो भैरव नारायण लोक को इस इच्छा से चले कि वहां जाने से पाप छूटेंगे। विष्णु ने भैरव को देख, लक्ष्मी से कहा–कि देखो परब्रह्म शिव आते हैं। यह धरती धन्य है और हम तुम सब शुद्ध हैं। यह तो पूर्ण स्वरूप से सदाशिव हैं। जिनके नाम लेने में दर्शन करने से फिर पुनर्जन्म नहीं मिलता वही कृपा करके यहाँ आते हैं। जब भैरव निकट आये तो विष्णु ने सर्वसभा सहित उठ कर भैरव की स्तुति की और कहा कि तुम तो सब पापों को दूर करने वाले और भक्तों को आनन्द देने वाले तथा अविनाशी हो तुम यह क्या चरित्र और लीला कर रहे हो हमसे वर्णन करो और जो तुम हाथ में शिर लिये हुए भ्रमण कर रहे हो इसका क्या

कारण है। तुम संसार के महाराजाधिराज हो यह तुम्हारा भीख मांगना आश्चर्य देता है। भैरव बोले कि हम ब्रह्मा का शिर काट पापी हुये। उस अधर्म से छूटने के लिए सृष्टि में फिरते हैं। विष्णु ने कहा कि मुझसे तीनों लोकों को मोहने वाली अपनी माया को दूर रखो तुम सृष्टि भर के स्वामी हो, जो तुम्हारी इच्छा होती वही सब करते हो, वह सब तुमको शोभायमान है। तुम तो संसार से भिन्न हो तुमको पुण्य पाप से कुछ प्रयोजन नहीं तुम्हारे नाम जपने से सर्व पाप भाग जाते हैं। जब तुम प्रलय में सब देवता, दैत्य, मुनीश्वर और वर्णाश्रमों को नष्ट करते हो, तब तुमको क्यों पाप नहीं लगता उस समय ब्रह्मा का तो अभाव कर देते हो अब केवल तुमको एक ही शिर काटने से पाप कैसे लग सकता है। अन्य कल्पों के ब्राह्मणों के शिर तुम्हारे गले में पड़े हुये हैं। उनकी ब्रह्म हत्या तुमको क्यों नहीं लगती अब अपने को पापी ठहराते हो, तुम्हारी विचित्र लीला है! देवता और मुनि कोई उसको नहीं जानते हैं और जिस भांति कि सूर्य के उदय होने से अंधियारा जाता रहता है। उसी भांति तुम्हारे भक्त के पाप नष्ट हो जाते हैं। जो एक बार तुम्हारा ध्यान करता है। उसका दुःख और ब्रह्महत्या आदि पाप दूर हो जाता है। तुम्हारे नाम लेने से पापों का पर्वत नष्ट हो जाता है।

चाहे कोई शत्रु भी तुम्हारे नाम शिव शङ्कर शशिशेखरादि ले वह भी आवागमन से छूटे और वह सदा कैलाश में स्थित रहेगा। तुम्हारा नाम शुभ है। तुमको यह शिर हाथ में लेकर भ्रमण करना उचित नहीं है। हमारा बड़ा भाग्य है कि जिसको योगी योग करके नहीं पाते वह हमारे

लोक धन्य हैं। जो आप ऐसे स्वामी को आज देखते हैं। आपकी दृष्टि अमृत का सा गुण रखती है। जिसको देखकर फिर आवागमन का भय नहीं रहता। जो अच्छे लोग तुम्हारा भजन करते हैं। वे स्वर्ग और मोक्ष को तृण (तिनके) के समान जानते हैं। विष्णु यह कह रहे थे कि भैरव ने भिक्षा मांगी लक्ष्मी ने भिक्षा देकर प्रणाम किया भैरव आगे चले और पीछे–पीछे ब्रह्महत्या भी चली।

पांचवां अध्याय

स्कन्दजी बोले–हे कुम्भज! विष्णु ने ब्रह्महत्या को भैरव के पीछे जाते देखकर कहा–कि भैरव का पीछा छोड़कर तुझे जो वर चाहिये वह हमसे मांग ले ब्रह्महत्या ने हँसकर कहा–कि मैं शिव जी की आज्ञा से भैरव के पीछे फिर कर अपने को शुद्ध करती फिरती हूं। भैरव को कुछ दुःख नहीं देती हूं। जो कोई भैरव का नाम लेता है, तुरन्त उसका घर छोड़कर भाग जाती हूं। हमारा अधिकार भैरव पर इतना नहीं है। यह बात केवल शिवजी की आज्ञा से हुई है। उनकी आज्ञा कौन भंग कर सकता है। यह कहकर ब्रह्महत्या उसी प्रकार भैरव के पीछे चली भैरव ने विष्णु के ऐसे विश्वास को देखकर कहा कि जो इच्छा हो वर मांग लो। हमको यह चाण्डाली कुछ दुःख नहीं दे सकती। हम यह आप ही संसार के लिये चरित्र कर रहे हैं। विष्णु बोले कि हमको यही बड़ा वर मिला कि आप हमारे लोक में आये हम यह चाहते हैं कि हम प्रतिदिन आपके चरण कमलों का ध्यान किया करें और हमको हर दिन आपके दर्शन मिलें। भैरव ने कहा तथास्तु। वही वर हमने तुमको दिया तुम भी देवता

और मुनीश्वरों को वर दिया करो और तीनों के स्वामी होकर आनन्द पूर्वक बैठे रहो यह कहकर और सब देशों की परिक्रमा कर काशी की ओर चले, वह काशी जिसके बराबर तीनों लोकों में कोई क्षेत्र नहीं, और जहाँ सबको परम मुक्ति प्राप्त होती है। जब भैरव काशी के समीप पहुंचे तब ब्रह्महत्या अति भयभीत हो चिल्लाने लगी जब भैरव बैठ गये तो वह हाहाकार करके पृथ्वी के नीचे चली गई और भैरव के हाथों से सिर धरती में गिर पड़ा भैरव अति प्रसन्न हुये। सब देवता और मुनीश्वरों ने जय–जय उच्चारण किया भैरव नाचने लगे हे कुम्भज मुनि! काशी की महिमा देखी यह सबसे श्रेष्ठ है। यह काशी शिवजी की कैसी न्यारी है कि जो पाप भैरव का और किसी स्थान में नहीं छूटा था यह काशी के भीतर जाते–जाते छूट गया हम उसकी महिमा कहाँ तक कहें वह तीनों लोक से निराली और मोक्ष देने वाली पुरी है। वह सब से श्रेष्ठ कपाल मोचन तीर्थ है जिसके दर्शन से ही सब पाप नष्ट हो जाते हैं। और जिसके स्मरण से बड़े–बड़े पाप छूट जाते हैं और मुक्ति मिलती है, वहाँ देवता और पितरों के तर्पण करने से ब्रह्महत्यादि छूट जाते हैं। इसके समान दूसरा तीर्थ नहीं है। जैसा कि वेद और पुराणादि कहते हैं, और जो कि मार्गशीर्ष कृष्ण अष्टमी को भैरव का अवतार हुआ तो उस दिन जो कोई व्रत करे उसके जनम भर के पाप दूर हो जावें, इसी प्रकार उस दिन जागरण का भी यह फल है जो कदाचित् भैरव के निकट जाकर काशी में व्रत को करें तो जो पाप किये हों वे सब दूर हो जावें कोई भी दोष न रहे और जो उस दिन भैरव की पूजा करे तो एक वर्ष के बड़े–बड़े सब पाप दूर हो जाते हैं और जो अष्टमी चतुर्दशी और रविवार

को भैरव की यात्रा करेगा उसके सब पाप छूट जावेंगे। जो कोई भैरव की आठ परिक्रमा करे तो उसको तीनों प्रकार के पाप न लगेंगे यह भैरव का व्रत सर्व व्रतों का राजा है, चारों फल को देने वाला है। जो मनुष्य दोनों लोक में सुख प्राप्त करने की इच्छा रखता हो वह इसी व्रत को निश्चय पूर्वक करें। इस व्रत के करने से भैरव अत्यन्त प्रसन्न होते हैं। इस भैरव चरित्र के सुनने से मुक्ति होती है और बड़ा आनन्द मिलता है।

बटुक नाथ ध्यानम्

कर कलित कपालः कुण्डली दण्ड पाणि
स्तरूण तिमिर नीलः व्याल यज्ञोपवीती
क्रतु समय सपर्यात् विघ्न विच्छेद हेतु
र्जयति बटुकनाथः सिद्धिदा साधकानाम्

बटुक भैरव अष्टोत्तर शतनाम स्तोत्रम्

कर कलित कपालः कुण्डली दण्ड पाणि।
स्तरूण तिमिर नीलः व्याल यज्ञोपवीती।
क्रतु समय सपर्यात् विघ्न विच्छेद हेतु।
र्जयति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम्।।

ॐ भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूत भावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्।।१।।
श्मशान वासी मांसाशि खर्पराशि मखान्त कृत।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धि सेविता।।२।।
कङ्कालः काल शमनः कलाकाष्टा तनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहु नेत्रश्च तथा पिङ्गल लोचनः।।३।।
शूल पाणि खड्ग पाणिः कङ्काली धूम्र लोचनः।
अभीरु भैरवी नाथो भूतपो योगिनी पतिः।।४।।
धनदो धनहारी च धनवान्प्रति भानुवान्।
नागहारी नागकेशी व्योमकेशः कपालभृत्।।५।।
कालः कपाल माली च कमनीयः कलानिधिः।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्र स्त्रि शिखि च त्रिलोकपः।।६।।
त्रिनेत्र तनयो डिम्भः शान्त शान्त जनप्रियः।
बटुको बहु वेशश्च खटवाङ्ग वर धारकः।।७।।
भूताध्यक्षः पशुपति भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्मरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः।।८।
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्कर प्रिय बान्धवः।
अष्टमूर्ति निधीशश्च ज्ञान चक्षु स्तपोमयः।।९।।
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्ता शिखी सखः।
भूधरो भूधराधीशो भूपति र्भूधरात्मजः।।१०।।
कं कालधारी मुण्डी च नाग यज्ञोपवीतवान्।
जृम्भणो मोहनस्तम्भी मारण क्षोभणस्तथा।।११।।
शुद्ध नीलाञ्जन प्रख्यो दैत्यहा मुण्ड भूषितः।
बलि भुग्बलि भूगनाथो बालो बाल पराक्रमः।।१२।।

सर्वोप तारणे दुर्गो दुष्ट भूत निषेवित:।
कामी कलानिधि: कान्त: कामिनी वश कृद्वशी।।१३।।
सर्व सिद्धि प्रदो वैद्य: प्रभूर्विष्णु रिति वहि।
अष्टोतर शतं नाम्ना भैरवस्य महात्मन:।।१४।।

ॐ नमो नवनाथेभ्य:

अथ नवनाथस्तोत्रम्

**आदेशवस्तुविषय: सुरसिद्धलक्ष्यो यश्चैकनाथ इह सन्नवमूर्ति–पूर्ति:।
सर्वोपरि प्रतिपलं वरिवर्ति कुर्वे कायेन तस्य मनसा वचसा प्रणामम्।।१।।**

भावार्थ–जो आदेश वस्तु का विषय है, सुर नर सिद्धों का लक्ष्य है और एकमात्र नाथ ब्रह्म होता हुआ यहाँ नवनाथों की नव मूर्तियों की पूर्ति कर रहा है एकोऽहं बहु स्यां प्रजायेय, ऐसी इच्छा शक्ति से स्वयं नवनाथों के रूप में अवतरित होकर भी जो सर्वदा सर्वोपरि वर्तमान है, उस श्रीनाथ को मनसा वाचा कायेन प्रणाम आदेश २ करता हूँ।।१।।

**मोहान्धकारविचलन्मनसो मनुष्यां,
स्वत्त्वोज्झितानपि परम्परयोपदेष्टुम्।
तत्त्वं विमुक्तय उताकृत योगशास्त्र,
मादेश एतु मम तत्र य आदिनाथ:।।२।।**

भावार्थ–तत्त्व से वञ्चित मोहान्धकार से विचलित मन वाले किंकर्तव्य विमूढ मनुष्यों को भी मुक्ति के लिये गुरु परम्परा से तत्त्व का उपदेश देने के लिये जिसने योग शास्त्र बनाया उस आदिनाथ को मेरा ॐनम आदेश पहुंचे।।२।।

यो ह्यादिनाथ उत राघवमत्स्जन्मा
मत्स्येन्द्रनाथ इति योगकभोगवृत्तिः।
विस्मापयन्नखिलसिद्धसुरांश्च जात आदेश
एतु मम तत्र पवित्रमूर्तो।।३।।

भावार्थ–जो आदिनाथ ही स्वयं राघव मत्स्य से जन्मे थे, वे मत्स्येन्द्रनाथ अखिल सिद्ध और देव दानव मानवों को विस्मित करते हुये योग और भोग वृत्ति वाले हुये, उन पवित्र मूर्ति से मेरा ॐनम आदेश जावे।।३।।

यो ह्यादिनाथ उत भोगभरं विहाय योगं
सतत्त्वमुदय क्रमतो निनाय।
नाम्ना श्रुतोऽस्त्युदयनाथ इति श्रितश्री
रादेश एतु मम तत्र पवित्रमूर्तो।।४।।

भावार्थ–जो आदिनाथ ही भोग भार को त्याग कर क्रमतः सतत्त्व योग को उदय में ले गये (जिसने योग का उदय किया) व उदयनाथ के नाम से विश्व श्रुति है, श्री लक्ष्मी जिनका आश्रय लेती है और जिसने अष्टसिद्धि नवनिधियों को आश्रय दिया है, उन पवित्र मूर्ति को मेरा ॐनम आदेश पहुंचे।।४।।

यश्चाप्यनेकभवभूतगणान् कृपातः
पात्वातिपीड़ितहृदः किल कालदण्डात्।
तद्दुर्लभामरपद स सुख निनाय
यद्दण्डनाथ इति सिद्धगणप्रसिद्धः।।५।।

भावार्थ–जो आदिकाल ही काल के दण्ड के भय से अतिपीड़ित हृदय वाले अनेक संसार के भूत प्राणिगणों को सुरक्षित रखकर उस

दुर्लभ अमर पद पर सुख पूर्वक ले गये, जिससे दण्डनाथ के नाम से सिद्धगण एवं गन्धर्व साक्ष्य यक्ष किन्नर आदित्य विश्वदेव वसु आदि देवता गणों में प्रसिद्ध हैं, उन पवित्र मूर्ति में मेरा ॐनम आदेश पहुंचे।।५।।

आत्मानमेव सकलेभ्य उपादिदेशा,
त्मन्येव नित्यरमणं किल यस्य यस्मात्।
सत्यप्रवाहक इतो नहि सत्यमन्यत्
सत्य स्वरूपइह यत् किल सत्यनाथः।।६।।

भावार्थ–जो आदिनाथ ही सत्यनाथ के रूप में सकल चराचर में आत्मा का ही आदेश और उपदेश करते हैं एवं आत्मा में ही नित्य रमण करते हैं, स्वात्माराम हैं, नहि स्वात्मारामं विषय मृग तृष्णा भ्रमयति, जो सत्य प्रवाहक संसार में सत्य का सन्देश वाहक और सत्य व्यवहार का प्रवाह चलाने वाले हैं, जिससे परे अन्य सत्य नहीं है, जो सत्य स्वरूप हैं, इसलिये यहाँ सत्यनाथ के नाम से प्रसिद्ध हैं, इन पवित्र मूर्ति में मेरा ॐनम आदेश पहुंचे।।६।।

सत्यस्वरूपकतया सततं ह्यसंग एकान्तिकोपि सततं स्वमुखे पराख्ये।
सन्तोषमादधदयं प्रससाद यस्मात्
सन्तोषनाथ इति गीयत इडयनामा।।७।।

भावार्थ–जो आदिनाथ ही सत्यनाथीय सत्य स्वरूप होने से सदा असङ्ग एवं एकान्त प्रिय ऐकान्तिक होते हुये परोख्य स्वसुख में सन्तोष धारण करते हुए सर्वदा प्रसन्न रहते हैं, जिससे सन्तोषनाथ के स्तुत्यनाम से गाये जाते हैं। उन पवित्र मूर्ति में मेरा ॐनम आदेश पहुंचे।।७।।

कूर्माभिधानमुपलक्षणमादधानो भूमीमधोभुवनमप्यबतीह यस्मात्।
यः कूर्मनाथ इति शर्मकरो जनाना,
मादेश एतु मम तत्र पवित्रमूर्तो।।८।।

भावार्थ–कूर्म नाम का उपलक्षण धारण करते हुये सप्त पाताल सहित भूमि का भार धारण करते हैं और सब प्रकार संरक्षण करते हैं, जो समस्त जनता को सुख देते हैं, जो कूर्मनाथ के नाम से प्रसिद्ध हैं, उन पवित्र मूर्ति में मेरा ॐनम आदेश पहुंचे।।८।।

पुण्यात्मनां विजयतां (त्रिजगतां) किल भुक्ति–मुक्ति–
दाने पुनः परमतत्त्वनिदेशनाय।
प्रावर्ततानुगुणयोगमयानुभूति–येनोत्तमा स च जलन्धरनाथनामा।।९।।

भावार्थ–जो आदिनाथ ही तीनों लोकों के विजयी पुण्यात्मा लोकों को भुक्ति मुक्ति देने के लिये पुनश्च परमतत्त्व का उपदेश देने के लिये प्रवृत्त हुये और अनुगुण योगमय उत्तम अनुभूति जिससे प्रवृत्त हुई वे जलन्धरनाथ के नाम से प्रसिद्ध हैं, उन पवित्र मूर्ति में मेरा ॐनम आदेश।।९।।

सर्वे क्षयेण रहिता विहिताश्च येन ये चेतना
हि गुणरूपविलक्षणत्वात्।
गोरक्षनाथ इति यः कथितो हि यस्मा,
द्वादेश एतु मम तत्र पवित्रमूर्तो।।१०।।

भावार्थ–जिस आदिनाथ शिव ने ही गोरक्षनाथ के रूप से अवतरित होकर सभी क्षय रोगी एवं मर्त्यधर्मा मरण शीलों को योगामृत से अजर–अमर कर दिया, विलक्षण गुण रूप वाले शिवगोरक्ष ने समस्त प्राणियों को अपने जैसे ही विलक्षण गुण रूप वाले बना दिया और जड़ों

को चेतना देकर चेतन कर दिया, क्षय=प्रलय काल से सबकी रक्षा करने से नवमनाथ शिव को गोरक्षनाथ कहा गया है, उन पवित्र मूर्ति में मेरा ॐनम आदेश पहुंचे।।१०।।

नवनाथनुतिं सततं रुचिरां, पठतीह जनः परमादरतः।
परितोषमुपेत्य स नाथ इतः प्रददाति मनोरथमात्मसुखम्।।११।।

भावार्थ–जो जन इस सुन्दर–रुचिर नवनाथ स्तुति का परम आदर से निरन्तर पाठ करते हैं, उनको नवनाथ प्रसन्न होकर मनोरथ पूर्ण कर देते हैं और आत्म सुख प्रदान करते हैं।।११।।

।। इति श्रीनवनाथस्तोत्रम्।।

❋ नमो नवनाथेभ्यः ❋

नवनाथनाम–कवित्त

आदिनाथ महेश आकाश रूप छायो रहे,
उदयनाथ पार्वती पृथ्वी रूप भाये हैं।
सत्यनाथ ब्रह्मा जी जिनका है जल रूप,
उन्हीं ने तो कृपा कर सृष्टि को रचाये हैं।
सन्तोषनाथ विष्णु तेज खाण्डा खड़ग रूप,
राजपाट अधिकारी वही तो कहाये हैं।
अचल अचम्भेनाथ जिनका है शेष रूप,
पृथ्वी का भार सब शीश पर उठाये हैं।

गजबेली गजकंथड़नाथ ऋद्धि सिद्धि देनहार,
हस्ति रूप धार गणपति कहलाये हैं।
ज्ञानपारखी चन्द्रमा सिद्ध हैं चौरंगीनाथ,
अठारह भार बनस्पति में वोही समाये हैं।

मायापति दादा गुरु कृपालु मत्स्येन्द्रनाथ,
सब ही का अन्न धन कपड़ा पुराये हैं।
गुरु तो गोरक्षनाथ स्वयं ज्योति स्वरूप जो,
विश्वम्भर योगशक्ति उदार फैलाये हैं।

बड़े हैं वे भाग्यवन्त जिन योग प्राप्त किया,
नवनाथ नवनाथ गुरु गुण गाये हैं।
नाथ ये त्रिलोक नवनाथ को नमन करे,
नवनाथ नाम शुभ मेरे मन भाये हैं।

दोहा– श्रीनवनाथ को बिनऊं, दीजिये शुभ आशीष।
आप ही मम सर्वस्व है, आप ही हैं मम ईश।।
करें कृपा मुझ दीन पर, करूं सुयश गुणगान।
नवनाथ माला शुभ रचूं, कीजिये बुद्धि प्रदान।।
जिसके पठन श्रवण से, मिटै त्रिविध भवताप।
अचल मोक्षपद पावहीं, जपि हैं जो नित आप।।

।। नवनाथ–स्वरूप।।

आदिनाथ सदाशिव हैं जिनका आकाश रूप,
उदयनाथ पार्वती पृथ्वी रूप जानिये।

सत्यनाथ ब्रह्माजी जिनका जल स्वरूप,
विष्णु सन्तोषनाथ तेजरूप मानिये।
अचल हैं अचम्भेनाथ जिनका है शेष रूप,
गजबेली गजकन्थड़नाथ हस्तिरूप जानिये।
ज्ञानपारखी जो सिद्ध है वो चौरंङ्गीनाथ,
अठारह भार वनस्पति चन्द्ररूप मानिये।
दादा श्रीमत्स्येन्द्रनाथ जिनका है माया रूप,
गुरु श्रीगोरक्षनाथ ज्योतिरूप जानिये।
बाल ये त्रिलोक नवनाथ को नमन करे,
नाथजी यह बाल को अपना ही मानिये।

*

।। नवनाथ कथा ।।

ज्योतिस्वरूप ॐकार महेश्वर आदिनाथ हैं धरणी स्वरूपा पार्वती विख्यात उदयनाथ हैं। जल स्वरूप ब्रह्मा सत्यनाथ हैं। तेजस्वरूप विष्णु सन्तोषनाथ हैं। वायुरूप शेषनाग अचलनाथ हैं। आकाश स्वरूप गणेश गजकन्थड़नाथ हैं वनस्पति स्वरूप चन्द्रमा चौरङ्गीनाथ हैं। माया स्वरूप करुणामय मत्स्येन्द्रनाथ हैं। अलक्ष्य स्वरूप अयोनिशंकर त्रिनेत्र गोरक्षनाथ हैं। इस प्रकार नवनाथों के स्वरूप सिद्ध योगियों ने कहे हैं। नवशक्ति युक्त नवनाथों को नमस्कार कर नवधा भक्ति नवनाथ के लिये नवनाथ कथा कही गई है।

प्राचीन समय में एक बार नवनाथ मण्डली भ्रमण करती हुई धर्मात्मा विदेहराज निमि की राज्यसभा में पहुंची। उन नवनाथ योगेश्वरों

में यह सामर्थ्य थी कि जहाँ चाहें वहाँ विचरें। इनकी गति कोई रोकने वाला न था। ये नवनाथ समस्त ब्रह्माण्डों में अपनी इच्छा अनुसार घूमते थे। राजा निमि भी साधुओं का परम भक्त था उसकी सभा में अनेक सिद्ध योगी देव ऋषि मुनि साधुजन रहा करते थे। उन तेज पुञ्ज नवनाथों को देखते ही समस्त सभा उठ खड़ी हुई और प्रणाम किया तब राजा निमि ने उनको साक्षात ईश्वर का स्वरूप समझकर बड़े आदर सत्कार पूर्वक पूजा की और बड़ी प्रसन्नता तथा नम्रता से राजा निमि ने प्रश्न किया। प्रश्न—आप लोग त्रिलोकी को करतलामलकवत् देखते हैं। आप लोग संसार का कल्याण करने को ही घूमा करते हैं। हे परम योगेश्वरों! संसार में ऐसा कौन सा उपाय है, जो प्राणी मात्र का कल्याण कर सके? इस प्रकार राजा के जगत्कल्याणकारी प्रश्न को सुनकर अत्यन्त प्रसन्न नवनाथ योगेश्वर क्रमशः उपदेश देने लगे।

उसमें सर्वप्रथम ॐकार स्वरूप बोले—हे राजन! इस संसार में भगवान के चरणों की उपासना ही ऐसी है, कि जिसका कदापि नाश नहीं होता और यही सम्पूर्ण भयों से रहित कल्याण का साधन है। इस उपासना से देह आदि के अभिमान में डूबे हुए पुरुष की सब भय बाधाऐं दूर हो जाती हैं। हे विदेहराज! मनु याज्ञवलक्य आदियों ने वर्णाश्रम आदि के धर्म आत्म—प्राप्ति के लिये जो कहे हैं, वही भगद्धर्म हैं। हे विदेह भगवतभक्त अविद्या से भयभीत नहीं होता। उसके सब विघ्न नष्ट हो जाते हैं। मनसा वाचा कर्मणा शास्त्र दृष्ट विधि से विहित कर्मों का ईश्वरार्पण भगवतद्धर्म है। राजन! भय भगवान की माया से होता है, इस लिये भगवान को ही परम गुरु मानना चाहिए और अपने गुरु में भगवद्बुद्धि से बर्ताव करना चाहिए, क्योंकि जगन्मोहनी माया से मोहित

भगवद्विमुखों को भगवद्स्वरूप का ज्ञान नहीं होता। यह मेरा है, यह दूसरे का है, ऐसी भेद बुद्धि से जन्तु बन्धन में पड़ते हैं। इसलिए माया को दूर करने के लिए भगवान की उपासना करनी चाहिये। यथा स्वप्न का दृश्य समस्त मिथ्या होता है, तथा जाग्रत का दृश्य यह जगत मिथ्या होते हुए भी सत्य प्रतीत होता है। क्योंकि अनादि प्रवाह रूप से सत्य है, परन्तु संयोग–वियोगात्मकता से मिथ्या है। इसलिए पुरुष संकल्प–विकल्पात्मक अपने मन को वश में करे तब पराभक्ति उत्पन्न होती है, और उससे अभय होता है, यदि मन का वशीकरण कठिन हो तो भगवान का स्मरण करना चाहिये। अथवा भगवत–चरित्रों का गान करे। जिसका मन भगवान में लग जाता है, वह जड़ोन्मतवत कभी नाचता है, कभी गाता है, कभी हँसता है, कभी रोता है, कभी स्तुति करता, कभी भ्रमण करता है, कभी–कभी उपालम्भ देता है, कभी चिल्लाता है, कभी मुदित होता है, और कभी निश्चल होकर ध्यान करता है। यह भक्ति का दूसरा उपाय है–संसार में जितने पदार्थ हैं तथा जितने प्राणी हैं वे सब भगवतस्वरूप हैं। ऐसा मानकर सर्वत्र भक्ति पूर्वक नमस्कार करे। यथा बुभुक्षित को ग्रास २ में तुष्टि होती है, तथा भक्त को पद–पद में वैराग्य होता है। हे निमिराज! इस प्रकार से भक्ति पूर्वक भगवान का भजन करते हुये भक्तों की भक्ति ज्ञानोत्पत्ति में समर्थ होती है, और देहपात के अन्तर वे मुक्ति को प्राप्त करते हैं।

इति श्रीजगन्मङ्गले भक्तिमुक्तिसाधने नवनाथ निमि संवादे
नवनाथकथायां भक्तिस्वरूपकथनमादिनाथोपदेश नाम
प्रथमोऽध्याय:

इतना सुनकर राजर्षि निमि पुनः प्रश्न करने लगे—हे शिव योगियों! उन भक्तों की किस धर्म में अधिक श्रद्धा होती है। कैसी वाणी होती? और कैसे चिन्ह हैं? यह सुनकर द्वितीय योगेश्वर उदयनाथ कहने लगे—हे राजन! भगवान के उत्तम भक्त आत्मा को सर्वत्र ब्रह्मवत व्यापक देखते हैं, समस्त चराचर को आत्मा में देखते हैं। मध्यम श्रेणी के भक्त भेद—बुद्धि से भगवान में भक्ति, भक्तों में मित्रता, अज्ञानियों पर दया, और वैरियों से उपेक्षा करते हैं। तृतीय श्रेणी की प्रवृति हो जावे तो संसार को मायामय जानकर प्रतिकूल विषयों से बैर नहीं करते और अनुकूल विषयों से हर्ष नहीं करते। ये श्रेष्ठ भक्त होते हैं। जो सदा भगवान का भजन करते हैं, देहेन्द्रियों धर्मों में आशक्ति नहीं रखते, और कर्मों से उसकी वासना उत्पन्न नहीं होती। जिनका एक ईश्वर ही आधार है, वे उत्तम भक्त हैं, जिनमें कुल का, जाति का, वर्ण का, आश्रम का, मित्र का, विद्या का, मान का, धन का, बन्धुओं का अभिमान नहीं है, प्राणीमात्र को समान देखते हैं, वे ही उत्तम भक्त हैं, और जो विषय विलासों को तुच्छ मान कर भगवान से मनोयोग करते हैं, वे उत्तम भक्त हैं।

इति श्रीजगन्मङ्गले भक्तमुक्तिसाधनेनवनाथ निमि संवादे
नवनाथकथायां भक्तलक्षणकथनमुदयनाथोपदेशो नाम
द्वितीयोऽध्यायः

यह सुनकर राजा निमि हाथ जोड़ कर पुनः प्रश्न करने लगे—हे योगीश्वरों! यह समस्त जगत भगवन्मायामय है, ऐसा जो जानता है, वह यदि उत्तम है, तो माया का भी वर्णन कीजिये यह सुनकर तृतीय

योगेश्वर सत्यनाथ ब्रह्मा कथन करने लगे–हे राजर्षे! प्राणियों को भोग मोक्षादि देने के लिए भगवान ने पंचभूतों से जितने भूत प्राणी उत्पन्न किये हैं वह उसकी माया है। जीव अन्तरात्मा के प्रदीप के प्रकाश से प्रकाशित इन्द्रियों के द्वारा विषय वर्ग का उपयोग करता हुआ देह मैं हूं। इन्द्रिय मैं हूं ऐसा जो मानता है, वह भगवान की माया है। कर्मेन्द्रियों से कर्मकर सुख दुःखादि भोगता हुआ प्राणी बारम्बार जन्म लेता है, और मरता है और मुक्ति नहीं पाता, यह भगवान की माया है अथ च प्रलय समय आने पर सौ वर्षों तक निरन्तर अनावृद्धि होती है। सहस्त्र सूर्य तपते हैं। फिर सौ वर्षों तक निरवंच्छिन्नितया हरित–शुण्ड समान जलधारों से मेघ बरसते हैं। जिससे विश्व जलमग्न हो जाता है। पृथ्वी जल में लीन होती है। तेज वायु में लीन होता है। वायु आकाश में लीन होती है। आकाश तामस अहंकार में लीन होता है। इन्द्रियों के साथ बुद्धि राजस अहंकार में लीन होती है। इन्द्रिय एवं मन के देवता सात्विक अहंकार में लीन होते हैं। अहंकार महत्तत्व में लीन होता है। महत्तत्व प्रकृति में लीन होता है। इत्यादि यह त्रिगुणात्मक समस्त संसार भगवान की माया है।

इति श्रीजगन्मङ्गले भक्तिमुक्तिसाधनेनवनाथ निमि संवादे
नवनाथकथायां मायास्वरूपकथनं सत्यनाथोपदेशो नाम
तृतीयोऽध्याय:

इतना सुनकर राजा निमि ने पूछा–हे सिद्धों विषय वासना से बद्ध जीव इस माया से कैसे पार होते हैं? तब चतुर्थ योगेश्वर सन्तोषनाथ विष्णु बोले–हे राजन! दुस्तर माया नदी को तरने के लिए

भक्ति की नौका के बिना दूसरा कोई साधन नहीं है, कर्म जालों में फंसे मोहान्धों का निस्तार नहीं है, बिना भक्ति के नाना प्रकार के उपायों से उपार्जित धन भी सुखदाई नहीं होता। इसी प्रकार अन्य वस्तुयें भी शाश्वत सुख नहीं देतीं। क्योंकि समस्त सांसारिक सुख क्षणभंगुर हैं। इसी प्रकार स्वर्ग में न्यूनाधिक तारतम्य से ईर्ष्या द्वेष आदि दोषों से दुःख अधिक है, सुख अल्प है, कर्मफल की समाप्ति में नीचे गिरना पड़ता है। इसलिए कल्याणकांक्षी को चाहिये कि कर्म, ब्रह्म दोनों के तत्व को जानने वाले सकल नियम तथा आगम में निष्णात, योग के अनुष्ठान से अन्तःकरण की वासना को भस्म करने वाले, पवित्र हृदय करतल में रखे आँवले के समान समस्त भुवन को देखने वाले, शिष्य के चित्त का सन्ताप हरण करने वाले, शिवयोगी गुरु की शरण में जावे। विधि पूर्वक गुरुकुल में निवास करता हुआ मनसा वाचा कर्मणा सर्वदा और सर्वथा भगवद्बुद्धि से गुरु की सेवा करता हुआ कटुता को त्यागकर निष्कपट भाव से हृदय के समस्त संशयों को गुरुचरणों में निवेदन कर गुरुपदिष्ट मार्ग से प्रथम मित्र, पुत्र कलत्र धन धान्य देह गेह आदियों में वैराग्यवान साधु संगति की रीति को जाने। तदन्तर सुखी में मित्रता, दुःखी में करुणा, पुण्यात्मा में मुदिता और पापों में उपेक्षा की भावना करता हुआ चित्त को प्रसन्न रखे। जलमृतिका आदि से बाह्य शुद्धि एवं यमनिमय आदि से अन्तःकरण की शुद्धि करता हुआ, निर्लोभ, निष्परिग्रह, निरहङ्कार, निरातङ्क, निरामय, निस्पृह वीतराग अवधूत होकर यदृच्छा लाभ से सन्तुष्टचित्त जटाधारी वल्कलवस्त्रवान कन्दमूल फलहारी जनसंसर्ग रहित होकर दिन बितावे। शास्त्रों में श्रद्धा गुरु में भगवत्बुद्धि, दुस्तर्कों का

परिहार परापवाद का परित्याग, वेद विरुद्ध मतों का तिरस्कार, श्रुति संवादों से स्मृतियों की परीक्षा नित्य धर्म का चिन्तन स्वल्प भाषण, वृथालाप से विरक्ति, प्राणायाम में परायणता, इन्द्रियों का निग्रह मन का वशीकार और भगवान के जन्म कर्म गुणों का नित्य श्रवण तथा श्रेष्ठ कर्मों का ही आचरण इत्यादि अनवद्य कर्म गुरु से सीखना चाहिए और विपरीत को त्याग देना चाहिए। यज्ञ दान व्रत उपवास जप तप सदाचार तथा अन्य जो वैदिक कर्म को अच्छे लगें उनको ईश्वर प्राणीधान विधि से भगवान के चरणों में अर्पण करे। स्त्री, पुत्र, धन, बन्धु गृहादिक समस्त भगवत्प्रदत्त प्रसाद जानकर यथा समय उपभोग करे। पहले स्थावर उनमें, जगम उनमें, मनुष्य उनमें, धर्मसेवी भगवत भक्त उनमें योगीश्वरों की ईश्वर बुद्धि से सेवा करना चाहिए। जिसमें भगवान में तन्मयता होती है। जब इस प्रकार प्राभक्ति लें भगवान में तन्मयता हो जाती है। तब वह भक्त भगवान के दर्शन के बिना अपने को मन्द भाग्य जानकर धिक्कारता हुआ रोता है। कभी भक्तवत्सल भगवान भक्ति के वश में होते हैं। ऐसा सोचकर मुद्रित होकर हँसता है। कभी आर्त की तरह उच्च स्वर से चित्कार करता है, कदाचित परमानन्द से मुदित होकर नाचता है, कदाचित भगवान के ध्यान में निमग्न होकर स्थाणु समान निश्चल हो जाता है। इस प्रकार भगवान का भक्त माया को तर जाता है।

इति श्रीजगन्मङ्गले भक्तिमुक्तिसाधनेनवनाथ निमि संवादे
नवनाथकथायां मायातिक्रमणोपायकथनं सन्तोषनाथोपदेशो
नाम चतुर्थोऽध्याय:

इस प्रकार सुनकर राजा निमि ने फिर प्रश्न किया—हे अवधूतों!

ब्रह्म क्या स्वरूप है ब्रह्म सदाशिव नारायण भगवान परमात्मा आदिनाथ ईश्वर गोरक्ष इत्यादि पदों का वाक्य एक है या भिन्न है, तब पंचम योगेश्वर अचलनाथ कहने लगे—हे विदेहराज! एक ही ब्रह्म सम्बन्ध भेदों में नाना नाम रूपों से भिन्न प्रतीत होता है। जो सृष्टि करता है, वह सृष्टा है। जो रक्षा करता है वह गोरक्ष। जो संहार करता है, वह हर है। जो व्याप्त करता है वह विष्णु है। जो शंकल्याण करता है, वह शंकर है। जिसमें जगत सोता है, वह शिव है। जो विशेषकर विराजमान होता है वह विराट है। शसुख जिसमें होता है, वह शम्भु है। जो प्राणियों का शासक है, वह ईश्वर है। जो रुलाता है, वह रुद्र है। जो जगत का नाश करता है, वह शर्व है। जो समर्थ होता है, वह ईशान है। कर्म फल भोगने वाले जीव पशु होते हैं। उनका पालक पशु पति है। वा पशु ज्ञान होता है। ज्ञान का पति पशुपति है। जो भूत प्राणियों का ईश है। वह भूतेश है। जो महान् ईश्वर है, वह महेश्वर है। जो प्राणियों का प्रेरक है, वह प्रभु है। जिससे संसार होता है, वह भव है। जो प्राणियों का प्रेरक है, वह प्रभु है। नाना नाम रूपों से जो क्रीड़ा करता है, वह देव है। जो महान देव है, वह महादेव है। जो व्याप्त करता है, वह आत्मा है। जो परम ईश्वर है, वह परमेश्वर है। षडैश्वर्य भग होता है भग वाला भगवान होता है। जल को नारा कहते हैं, नारा अयनपूर्व निवास जिसका हो वह नारायण है। जो सर्वान्ति में शेष रहे वह शेष हैं। इस हृदय में जो गमन रहता है वह इन्द्र है। शरीर के पुर में जो शयन करे वह पुरुष है। जो मिलने वाले का त्राण करे वह मित्र है। जो जगत का वरण करता है वह वरण है। जो जीवों का नियमन करता है, वह यम है। दहराकाश में जो गमन करता वह मातरिश्वा है। जो समस्त नरों को अपने में लेता है, वह वैश्वानर है। सर्वत्र जाता है, वह वायु है, जो सर्वोच्च पद में ले जाता है वह अग्नि

है। जो ऐश्वर्यवान होता है, और जो आशीर्वाद से कल्याण करता है। वह नाथ होता है जो लोकों का नाथ है, वह लोकनाथ है। जिसमें सब लोक बसते हैं वह वसु हैं। वसु रूपी देव ही वसु हैं। वासुदेव ही वासुदेव हैं। जो विश्व का विधान और धारण करता है, वह विधाता है जिसमें योगी लोग रमण करते हैं, वह राम है। जो परिवृद्ध होता है, वह ब्रह्म है। इस प्रकार एक परमेश्वर के नाना कार्य भेदों से नामों की निरुक्ति की जाती है। वास्तविक भेद नहीं है, जो जीवों के जाग्रत स्वप्न और सुषुप्ति में साक्षिक रूप से भासता है, वह ब्रह्म है। जो समाधि में परमज्योति है वह ब्रह्म है। जैसे स्फुलिंग 'महाग्नि' को प्रकाशित नहीं कर सकता किन्तु आत्मा से प्रकाशित होती है। जहाँ से वेद भी मन के साथ लौट जाता है। वहाँ इन्द्रियों की क्या कथा? जो वाणी का भी प्रेरक है, वह ब्रह्म है। ऐसा कह कर श्रुति मौन हो गई। संसार जो स्थूल है, और जो सूक्ष्म है, वहं ब्रह्म ही है। क्योंकि सबका मूल कारण ब्रह्म है। अनन्त शक्ति होने से एक ही अनेक प्रकार से प्रतीत होता है, आत्मा न जन्मता है, न बढ़ता है, न परिणत होता है, न क्षीण होता है और न नष्ट होता है क्योंकि बाल्य तरुणता एवं बृद्धता देह के धर्म हैं आत्मा के नहीं। आत्मा सर्वदा एक रस है। उसमें विकार का लेश नहीं है और सबका आनन्द दाता है।

इति श्रीजगन्मङ्गले भक्तिमुक्तिसाधनेनवनाथ निमि संवादे
नवनाथकथायां ब्रह्मस्वरूपप्रतिपादन मचलनाथोपदेश
नाम पञ्चमोऽध्याय:

यह सुनकर राजा फिर बोले—हे जगनमङ्गल योगीश्वरों! अब

आप लोग कर्मयोग का उपदेश कीजिये। जिस कर्मयोग से मनुष्य इसी जन्म में कमपास का छेदन कर कैवल्य मुक्ति लाभ करें। यही प्रश्न एक बार पिता इक्ष्वाकु के निकट सनकादिक सिद्धों से किया था किन्तु उन्होंने उत्तर नहीं दिया। इसमें क्या कारण है? ऐसा सुनकर षष्टम योगेश्वर गजकन्थड़नाथ कहने लगे—राजन! ईश्वर के विश्वासरूपी शब्द राशि वेद में कर्म अकर्म विकर्म इस रीति से तीन प्रकार के कर्म होते हैं। वेद अपौरुषेय हैं। जहाँ वाक्यों का पूर्वा पर समन्वय योगियों को भी दुष्कर हैं। कर्मगति गहन हैं। उस समय तुम बालक थे। इसी कारण से उन सिद्धों ने कर्मयोग का उपदेश नहीं दिया। वेद परोक्ष वादी है। एक अर्थ को गुप्त रखकर द्वितीय अर्थ का प्रतिपादन करता है जो जैसे समझता है उसको वैसा ही समझाता है। तदनुसार कर्म करता है। तदनुकूल ही फल मिलता है, जैसे रोगी बालक को वैद्य मिठाई के साथ औषधि देता है। वैसे ही वेद स्वर्गादिसुख के लाभ से मोक्षार्थ पुरुष को कर्म योग का उपदेश्र देता है। जो वेदविहित कर्म नहीं करता वह घोर नरक में जाता है। जो वेदविहित कर्म करता है वह ज्ञान वैराग्य भक्ति लाभ द्वारा मोक्ष प्राप्त करता है। वेद में स्वर्गादि भोगें का जो उपदेश है वह केवल कर्म की प्रशंसार्थ है। यह वैदिक कर्मयोग है। अब तांत्रिक कर्मयोग का वर्णन करते हैं—गुरुपदिष्ट मार्ग से प्राणायाम करके स्वेष्ट मूर्ति को मन्त्रपूर्वक पाद्य अर्घ आसन मधुपर्क स्नान वस्त्र भूषण गन्ध चन्दन पत्र पुष्प अक्षत माला धूप दीप नैवेद्य पान सुपारी यज्ञोपवीत आदि सामग्रियों से यथाविधि पूजा करें। स्तुति नमस्कार जप ध्यान करके भगवान की प्रदक्षिणा कर प्रसाद ग्रहण कर नैवेद्य खावें। मूर्ति को सिंहासन में रख कर विसर्जन करें। इस

प्रकार आराधना करें। इसी प्रकार प्रधान २ अग्नि सूर्य जल वायु पृथ्वी तथा अन्य दिक्पालों की उपासना परमेश्वर बुद्धि करे। ऐसा जो करता है प्राणिधान से कर्मजाल से मुक्त होता है एवं जिस प्राकृत वस्तु में रूचि उत्पन्न हो उसमें भगवत् भावना करे इस प्रकार यह तांत्रिक कर्मयोग है।

इति श्रीजगन्मङ्गले भक्तिमुक्तिसाधनेनवनाथ निमि संवादे नवनाथकथायां मायातिक्रमणोपायकथनं गजकन्थड़नाथोपदेशो नाम षष्टोऽध्याय:

इस कर्मयोग विधि को सुनकर विदेहराज निमि ने भगवान के अवतार की जिज्ञासा की। राजा ने कहा—हे नवनाथ सिद्धों! भगवान समय—समय में अपने अवतारों में जो कर्म करते हैं। वह सुनना चाहता हूं। उपदेश कीजिये। इतना सुनकर सप्तम योगीश्वर चौरंगीनाथ कहने लगे—राजन! जो भगवान के अनन्त जन्म कर्म गुणों की गणना करना चाहता है। वह समुद्र के बालुकाकणों की गणना करता है वर्षा के बिन्दुओं की गिनती करता है। पृथ्वी के परमाणुओं की संख्या करता है। हे विदेह! तथापि प्रधानतया कहते हैं—उस परमेश्वर ने आकाशादि पंच महाभूतों को उत्पन्न कर ब्रह्माण्ड भाण्ड के उदर में स्वयं प्रवेश किया। तब वह पुरुष के नाम विख्यात हुआ। जिसमें ब्रह्मा विष्णु रुद्र आदि उत्पन्न हुए जो सृष्टि स्थिति लय आदि करते हैं। दक्ष प्रजापति की कन्या धर्म की पत्नी के गर्भ से नर नारायण नाम के दो अवतार हुए। जो अद्यापि नारदादि सिद्ध ऋषि योगियों की मण्डली के साथ हिमालय के बद्रिकाश्रम में तपस्या करते हैं। वहां पर उनके योगबल से भयभीत इन्द्र

ने एक समय तपोभंग करने के लिए सखा बसन्त के साथ कामदेव को अप्सराओं सहित भेजा। तब कामदेव ने वहां पर बसन्त ऋतु के प्रबृद्ध हो जाने पर मेनका, रम्भा, मंजुघोषा, तिलोत्तमा, धताची, संकेशी प्रमुख अप्सराओं के लीला विलासों से उनकी समाधि खंडित करने में पूरा प्रयत्न किया। उस समय नर नारायण कामदेव की मूर्खता को देखकर लज्जानत मस्तक मदन शाप भय से कांपने लगा। उसको कांपते देखकर नर नारायण बोले—हे सपरिवार मदन! मत डरो, तुम्हारा स्वागत है आतिथ्य ग्रहण करो और आश्रम को कृतार्थ करो क्योंकि जहां अतिथि सत्कार नहीं होता वहां देवता नहीं रहते। इतना सुनकर लज्जा से सिर झुकाकर हाथ जोड़कर अप्सराओं के साथ नर नारायण की स्तुति करने लगा—हे देव आप माया रहित हैं निर्विकार हैं निरंजन हैं निष्काम हैं निस्पृह हैं और योगेश्वर हैं। आपके चरणार्बिन्द की सेवा सुर नर मुनि जन सदा करते हैं। आपका तपोभङ्ग कौन कर सकता है? भङ्ग करने वाले का ही भङ्ग होता है। हे नाथ आपके सेवक ही स्वर्ग का उल्लंघन कर वैकुण्ठ में अकुन्ठित गति से प्रवेश करते हैं। आपके सम्मुख बेचारा इन्द्र क्या वस्तु है। जिसके नाम से ही भक्त लोग विघ्नों को दूर कर देते हैं। उनका विघ्न कौन कर सकता है? मनुष्य दो प्रकार के हैं। जो आपकी भक्ति त्याग कर भोगार्थ कर्म करते हैं। वे प्राय: क्रोधादियों के वश में हो जाते हैं या हमारे जैसों के वश में आ जाते हैं जो हमारे वश में आ जाते हैं वे क्षणिक स्वर्ग भोग भोगते हैं और जो क्रोधादियों के वश होते हैं वे अतीव क्लेश उठाते हैं। कुछ तपस्वी जन भूख प्यास शीत उष्ण आदि द्वन्द सहिष्णु होते हुए भी कोप के वशीभूत तिनकों की अग्नि के तुल्य

अल्प शक्ति वाले गोष्पद जल में डूब जाते हैं। चिरकाल सञ्चित तपस्या को भी निष्फल कर देते हैं। हे राजन! जब कामदेव ने नर नारायण ऋषि की ऐसी स्तुति की तो उन्होंने उनका गर्व चूर करने के लिये योगबल से हजारों दिव्य स्त्रियों की सृष्टि की। जिनका रूप लावण्य देखकर समस्त लोकों को मोहन करने वाली अप्सरायें और जगत का उन्मादन करने वाला मदन भी एक साथ मोहित हो गये। सहस्त्र चन्द्रों के सम्मुख तारागण के समान निस्तेज होकर लज्जासागर में डूब गये। उनको ऐसा देखकर मन्दस्मित पूर्वक नर नारायण कहने लगे–हे मन्मथ! इच्छानुसार इसमें से किसी कामिनी को माँगो तब निरुत्तर नीचे सिर किये कामदेव ने बारंबार आज्ञा देने पर सम्पदा से त्रिलोकी को वश में करने वाली उर्वशी नाम की स्त्री रत्न को ग्रहण कर नारायण के चरणों में प्रणाम कर स्वर्ग के लिये प्रस्थान किया। अमरावती की सुधर्मा सभा में सिंहासनारुढ़ देवेन्द्र नर नारायण दत्त की सेवा में उर्वशी को समर्पित कर वृतान्त सुनाया जिससे इन्द्र लज्जित एवं विस्मित हुआ। हे विदेह! अब अन्य अवतारों का चरित्र सुनो। हंसावतार से परमेश्वर ने ब्रह्मा को ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया। दत्तावतार से अनसूया को अतुल कीर्ति दी। सनकादि सिद्धों के अवतार से साधकों को सिद्धि दी। ऋषभावतार से नरऋषियों को धर्म का उपदेश दिया। हयग्रीवावतार से दु:ख से व्यग्र जीवों का उद्धार किया। मत्स्येन्द्रावतार से शंखासुर को मारा और औषधि बीजों के साथ मनु की रक्षा की। वाराहावतार से हिरण्याक्ष को मारा और जलमग्न पृथ्वी का उद्धार किया। कूर्मावतार से मन्दराचल को धारण किया और रत्न उत्पन्न किया। नृसिंहावतार से

हिरण्यकश्यप को मारा और प्रहलाद को आनन्दित किया। चक्री अवतार से चक्र द्वारा ग्राह को मारा और गजेन्द्र को मोक्ष दिया। कदाचित कश्यप के होम के लिये समिधा लाये। कदाचित् बालखिल्य ऋषियों गोष्पद जलमग्न से बचाया। कदाचित् इन्द्र ब्रह्महत्या से मुक्त किया। कदाचित् दैत्य के बन्दीगृह से देवङ्गनाओं को मुक्त किया। कदाचित् पीयूषहरण के लिये मोहनी अवतार से असुरों को मोहित किया। कदाचित् वामनावतार से पाताल में बलि का बन्धन किया। और तीन चरणों में त्रिलोकी को व्याप्त किया। जामदग्न्य अवतार से सहस्रबाहु का बल नष्ट किया और पितरों का तर्पण किया। रामावतार से दारुण रावण को मारा और लोक मर्यादा बांधी। कृष्णावतार से गोवर्धन का उद्धार किया और नाना प्रकार की लीलायें की। बुद्धावतार से व्यर्थ हिंसा को रोका और करुणा से लोकों का उद्धार किया। कल्की अवतार से म्लेच्छों का उच्छेद कर सत्युग प्रवृत्त किया। इस प्रकार यथासमय अवतार लेकर परमेश्वरगत् का प्रतिपालन करता है।

इति श्रीजगन्मङ्गले भक्तिमुक्तिसाधनेनवनाथ निमि संवादे नवनाथकथायां परमेश्वरावतारवर्णनं चौरंगिनाथोपदेशो नाम सप्तमोऽध्याय:

इतना सुनकर राजा ने पूछा—हे अवधूतों! जो नर भगवत भक्ति रहित केवल विषय निरत रहते हैं। उनकी क्या गति होती है? ऐसा सुनकर अष्टम योगेश्वर करुणामयमायामत्स्येन्द्रनाथ बोले—हे राजन निमि! भगवान नारायण के विराट स्वरूप के मुख से ब्राह्मण, बाहु से क्षत्रिये, उरु

से वैश्य, पाद से शूद्र उत्पन्न हुआ। सत्व प्रधान ब्राह्मण, सत्वरज: प्रधान क्षत्रिय, रजस्तम प्रधान वैश्य, तम प्रधान शूद्र होता है। सदाचार में ब्राह्मण की प्रतिष्ठा है, शौर्य में क्षत्रिय की प्रतिष्ठा है, व्यवसाय में वैश्य की प्रतिष्ठा है, सेवा शूद्र की प्रतिष्ठा है। हृदय से ब्रह्मचर्य, कुक्षि से गृहस्थ, वक्षस्थल से वानप्रस्थ, मस्तक से चतुर्थ योगाश्रम उत्पन्न हुआ है। जो भगवान का भजन नहीं करते वे कृतघ्न मरकर दुर्गति को प्राप्त करते हैं, कर्मजाल से मोहित मनुष्य भक्ति की निन्दा करते हैं। किन्तु वे शाश्वत सुख नहीं पाते स्वार्थ के लिए जो सहस्रों अनर्थ करते हैं उनका निस्तार नहीं है। जो देश जाति कुल धन बन्धु पुत्र कलत्र मित्र क्षत्रु बल बुद्धि विद्या अधिकार आदि से मुग्ध हुए मदान्ध लोग भगवान की ओर भगवत् भक्ति की निन्दा करते हैं उनका कल्याण नहीं है। जो न जानते हुए भी वेदज्ञों का अभिमान करते हुए निवृति पूरक वेद की प्रवृति पूरक करके प्रतिपादन करते हैं। अपने कपोल कल्पित मतों से मनुष्यों को मोहित कर स्वार्थ सिद्धि करते हैं, वे घोर नरक में जाते हैं। और जो वेद विरुद्ध ग्रन्थों को बनाकर सिद्धों के ऋषियों के यथा भगवान के नाम से दुराचार का प्रचार करते हैं, केवल पशु हिंसा मद्य मांस मादक द्रव्य आदि अभक्ष्य भक्षण से विषय विलास में निरत मनुष्य उत्तम गति नहीं पाते। धर्म के लिये धन है दुर्विषय के लिए नहीं। परोपकार के लिए शरीर है सुख भोगने के लिए नहीं। तत्वज्ञान के लिए विद्या है वाद विवाद के लिए नहीं। यज्ञ के लिए सोमरस यथेष्टपान के लिए नहीं। आर्त रक्षा के लिए बल है दीन दुखियों का दलन करने के लिए नहीं। विषम परिस्थिति में कर्तव्य निर्णय करने के लिए नहीं। विषम परिस्थिति में कर्तव्य निर्णय करने के लिए बुद्धि है परिच्छेद गवेषणा के लिए नहीं। इन वस्तुओं का

विपरीत प्रयोग करने वाले खल कदापि कल्याणभागी नहीं होते। जो निर्दयी पुरुष पशु हिंसा से अपना पेट भरते हैं उनको पशु भी मरने के बाद उसी प्रकार से हिंसा करते हैं। ज्ञानी भक्त अनायास ही भवसागर को पार करते हैं। जो मनुष्य नित्य परनिन्दा अपवाद पिशुनता अनिष्ट चिन्तन कलहादि में तत्पर रहते हैं और परलोक से निश्चिन्त रहते हैं। जो निरववधि नरक में जाते हैं।

इति श्रीजगन्मङ्गले भक्तिमुक्तिसाधनेनवनाथ निमि संवादे
नवनाथकथायां विराट्स्वरूपवर्णने विषयगति प्रतिपादनं
मत्स्येन्द्रनाथोपदेशो नामाष्टमोऽध्याय:

राजा निमि बोले—हे योगेश्वरों! नारायण किस समय किस वर्ण और किस आकार के होते हैं और उनकी किस नाम किस विधि से पूजा करनी चाहिए। तब नवम योगेश्वर श्री शम्भूयति गुरु गोरक्षनाथ जी बोले—हे राजन्! चारों युगों में चारों वर्ण भूप रंग और आकार को धारण करने वाले भगवान को अनेक प्रकार की विधि से पूजन करते हैं। सतयुग में शुक्ल वर्ण चार भुजाधारी जटाधारी बल्कल पहनने वाले ब्रह्मचारी रूप भगवान रहते हैं। इस युग के मनुष्य शान्त वैर विरोध से रहित सब के मित्र सुख दुख में समान ध्यानी योगी इन्द्रिय जीत होते हैं, और वह ऊपर कहे हुये भगवान के स्वरूप का पूजन करते हैं हंस सर्वदा वैकुण्ठ धर्म योगेश्वर मनु ईश्वर पुरुष अव्यक्त परमात्मा आदि नामों का जप करते हैं। त्रेता युग में लाल रंग के चार भुजाधारी कमर में तीन लड़ की मेखला धारण करने वाले, पिंगल रंग के बाल वाले, हाथ में श्रवा

श्रुति धारण करने वाले, यज्ञ मूर्ति भगवान होते हैं उस समय के पुरुष धर्मात्मा ब्रह्मज्ञानी होते हैं और श्री हरिनारायण का तीनों वेदों में कहे हुए वेद विधि से पूजन करते हैं और वह पुरुष विष्णु यज्ञ, विष्णुगर्भ, सर्वदेव उरुकुम वृषा, कपि जयन्त उरुगाय आदि नामों का जप करते हैं। द्वापर युग में काले रंग के पीले वस्त्रधारी आयुधों को धारण करने वाले और वत्सादि लक्षणों से भूषित होते हैं और तत्व ज्ञानी पुरुष वेद और वासुदेव, शिवशंकर, सच्चिदानन्द, सर्वव्यापक पतित पावन आदि नामों का जप करते हैं। कलयुग में श्याम रंग वाले उत्पन्न कान्तिमान और शंख चक्र गदा पद्मधारी नन्द सुनन्द आदि पार्षदों से घिरे हुये श्री कल्की भगवान होते हैं और उन्हीं के ईश्वर, गोरक्ष, माधव विभु, सर्वज्ञ आदि नामों का जा!प करते हैं।

इस प्रकार चारों युगों में भगवान की स्तुति पूजा की जाती है, किन्तु गुणग्राही पुरुष और युगों की अपेक्षा कल्युग की ही अधिक प्रशंसा गाते हैं, क्योंकि सत्युग में ध्यान लगाने से त्रेता में यज्ञ करने से, जो फल मिलता है वह फल कल्युग में केवल नाम जपने से मिल जाता है। नाम जपने से ही मुक्ति रूपी शान्ति मिलती है और जीव आवागमन से छूट जाता है, राजा निमि और युगों की बजाय कल्युग में गोरक्ष योगेश्वर प्रभु परमेश्वर होंगे वहां हम भी जन्म लेकर भक्त कहावेंगे, हे राजन्! कल्युग के किसी देश विदेश में द्राविड़ देश में विशेष कर भगवान् के भक्त जन्म लेंगे, जहां ताम्र पर्णि कृतमाल पयश्चिनी कावेरी और महानदी प्रतिची नदियां हों वह द्राविड़ देश है और पुरुष उन नदियों का जल पीते हैं वे अवश्य भक्त होते हैं, हे राजा निमि जो पुरुषदेव पितृ-ऋषि गुरु

होता है वह भी यदि भगवान के शरण में जाय तो सब ऋणों से मुक्त हो जाता है, भक्ति में यह सामर्थ्य है सब ऋण पूरे कर देती है भूल से यदि भक्त से कोई पाप हो जाये तो भगवान् क्षमा कर देते हैं, उसको प्रायश्चित नहीं करना पड़ता, वह हरि की कृपा से दूर हो जाता है, इस प्रकार भगवान् का धर्म नवों योगेश्वरों के मुख से सुनकर राजा निमि अत्यन्त प्रसन्न हुये और षोडषोपचार विधि से पूजा की, पश्चात नवनाथ सिद्ध योगेश्वर अन्तरध्यान हो गये, उनके बताये हुये धर्म का पालन करते हुये राजा निमि भी कुटुम्ब रहित परम गति को प्राप्त हुये और ऋषि मुनि मण्डली भी इस आश्चर्य को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुई इतने सत्संग का तो कहना ही क्या है, यदि क्षण भर का भी सत्संग मिल जाये तो वह भी अनेक पापों को भस्म कर देता है।

इति श्री मौलि मौलिस्थ कालीस्थान-योग विद्या निधि
रसिक राजगुरु मौक्तिक नाथ कृता नवनाथकथा
सम्पूर्णा ॐ शान्तिः ३।

।। नवनाथ चरित्र ।।

दोहा— आदिनाथ आकाश स्वरूपी, सूक्ष्मरूप ॐकार।
तीन लोक में हो रहा, आपका जय जय कार।।१।।

।। चौपाई ।।

जय जय जय कैलाश निवासी, योगभूमि उत्तराखण्डवासी।
शीश जटाशुभ गङ्ग विराजे, कानन कुण्डल सुन्दर साजे।।२।।
डिमक डिमक डिम डमरू बाजे, ताल मृदङ्ग मधुर ध्वनि गाजे।
ताण्डव नृत्य किया शिव जबहि, चौदह सूत्र प्रकट भये तबही।।३।।
शब्द शास्त्र का किया प्रकाशा, योगयुक्ति राखे निज पासा।
भेद तुम्हारा सबसे न्यारा, जाने कोई जाननहारा।।४।।
योगी जन तुमको अति प्यारे, जरामरण के कष्ट निवारे।
योग प्रकट करने के कारन, गोरखरूप किया शिव धारन।।५।।
ब्रह्मा विष्णु को योग बताया, नारद ने निज शीश नमाया।
कहां तलक वरणौं गाथा, आदि अनादि हो आदिनाथा।।६।।

दोहा— उदयनाथ तुम पार्वती, प्राणनाथ भी आप।
धरतीरूप सो जानिये, मिटे त्रिविध भव ताप।।७।।

।। चौपाई ।।

जय जय जय उदय मातभवानी, करो कृपा निज बालक जानी।
पृथ्वी रूप क्षमा तुम करती, दुर्गारूप असुर भय हरती।।८।।
आदि शक्ति का रूप तुम्हारा, जानत जीव चराचर सारा।
अन्नपूर्णा बन के जग पाला, धरयो रूप सुन्दरी बाला।।९।।
ब्रह्मा विष्णु भी शीश नमावें, नारद शारद मिल गुण गावें।
योग युक्ति में तुम सहकारी, तुम्हें सदा पूजे नर नारी।।१०।।
योगी जन पर कृपा तुम्हारी, भक्त भीड़ भञ्जन हारी।
मैं बालक तुम मातु हमारी, दीजै भव–सागर से तारी।।११।।

करो कृपा मो पर महारानी, तुम सरि कोउ न दूसर दानी।
पाठ करे जो यह चित लाई, उदयनाथ जो होय सहाई।।१२।।

दोहा– सत्यनाथ हैं सृष्टिपति, जिनका है जलरूप।
नमन करत हैं आपको, सचराचर के भूप।।१३।।

।। चौपाई ।।

जय जय जय सतनाथ कृपाला, दया करो हे दीनदयाला।
करके कृपा यह सृष्टि रचाई, भांति भांति की वस्तु बनाई।।१४।।
चार वेद का किया उचारा, ऋषि मुनि मिल के किया विचारा।
सनक सनन्दन सनत कुमारा, नारद शारद गुण भण्डारा।।१५।।
जगहित सबको प्रकटित कीन्हा, उत्तम ज्ञान योग पद दीन्हा।
पाताल भुवनेश्वर सुन्दर, सत्यनाथ पथ धाम मनोहर।।१६।।
कुरुक्षेत्र पृथूदक आये, सत्यनाथ योगी कहलाये।
आपकी महिमा अगम अपारा, जानत है त्रिभुवन जन सारा।।१७।।
आशा तृष्णा निकट न आवै, माया ममता दूर नशावै।
सत्यनाथ का जो गुण गावै, निश्चय उनका दर्शन पावै।।१८।।

दोहा– विष्णु तो सन्तोष नाथ, खांडा खड्ग स्वरूप।
राजपाट दिव्य तेज है, तीन लोक के भूप।।१९।।

।। चौपाई ।।

जय जय जय श्री स्वर्ग निवासी, करो कृपा मिटे जमफाँसी।
सुन्दर रूप विष्णु तन धारे, सचराचर के पालन हारे।।२०।।
सब देवन में मान तुम्हारा, जग कल्याण हित लेत अवतारा।
जन–पालन का काम तुम्हारा, भीड़ पड़े देवन को उबारा।।२१।।
योग युक्ति गोरख से लीन्ही, शिव प्रसन्न हो दीक्षा दीन्ही।
शंख चक्र गदा पद्म धारी, कानों में कुण्डल शुभकारी।।२२।।

शेषनाग की सेज बिछाई, निज भक्तन के होत सहाई।
ऋषि मुनि जनके काज सुधारे, अधम दुष्ट पापी भी तारे।।२३।।
देवासुर–संग्राम छिड़ाये, सारा असुरदल मार भगाये।
सन्तोषनाथ की कृपा पावे, जो चित लाय पाठ यह गावे।।२४।।

दोहा– शेषरूप है आपका, अचल अचम्भेनाथ।
आदिनाथ के आप प्रिय, सदा रहे उन साथ।।२५।।

।। चौपाई ।।

जय जय जय योगी अचलेश्वर, सकल सृष्टि धारे शिर ऊपर।
अकथ अथाह आपकी शक्ति, जानो पावन योग की युक्ति।।२६।।
शब्द–शास्त्र के आप नियन्ता, शेषनाग तुम हो भगवन्ता।
बालयती है रूप तुम्हारा, निद्र जीत क्षुधा को मारा।।२७।।
नाम तुम्हारा बालगुन्दाई, टिल्ला शिवपुरी धाम सुहाई।
सागर मथन को हुई तैयारी, देव दैत्य की सेना भारी।।२८।।
पर दुःख भञ्जन परहित काजा, नेती आप भये सिद्धराजा।
सागर मंथ अमृत प्रकटाया, सब देवन को अमर बनाया।।२९।।
जतियों में भी नाम तुम्हारा, योगियों में सिद्ध पद धारा।
सदा बालक रूप सुहाये, अचल अचम्भेनाथ कहाये।।३०।।

दोहा– गजबेली गज के रूप हैं, गणपति कन्थड़नाथ।
देवों में हैं अग्रगण्य, सब कोई जोड़े हाथ।।३१।।

।। चौपाई ।।

जय जय जय श्रीकन्थड़ देवा, करो कृपा मैं करूं नित सेवा।
मोदक है अति तुमको प्यारे, मूषक वाहन परम सुखारे।।३२।।
पहले पूजा करे तुम्हारी, काज होय शुभ मंगलकारी।
कीन्हीं परीक्षा जब त्रिपुरारी, देखी चतुरता भये सुखारी।।३३।।
ऋद्धि सिद्धि चरनों की दासी, आप सदा रहते वनवासी।
जगहित योगी भेष बनाये, कन्थड़िनाथ जी नाम धराये।।३४।।

कन्थड़कोट में आसन कीन्हा, चमत्कार राजा का दीन्हा।
सात बार तो कोट गिराये, बड़े–बड़े भूपन को नमाये।।३५।।
वसुनाथ पर कृपा तुम्हारी, करी तपस्या कूप में भारी।
अंकरण कापड़ी शिष्य तुम्हारे, करो कृपा हरो विघ्न हमारे।।३६।।

दोहा– ज्ञान पारखी सिद्ध है, चन्द्र चौरङ्गीनाथ।
जिनका वनस्पतिरूप है, उन्हें नमाऊ माथ।।३७।।

।। चौपाई ।।

जय जय जय श्रीसिद्ध चौरंगी, योगिन के तुम नित हो सङ्गी।
शीतल रूप चन्द्र अवतारा, सदा करो अमृत की धारा।।३८।।
वनस्पति में अंश तुम्हारे, औषधि से सुख भये सुखारे।
शालिवाह्न है वंश तुम्हारा, बालपने योगी तन धारा।।३९।।
अति सुन्दर तुम सुन्दर ताई, सुन्दरा रानी देख लुभाई।
गुरु शरण में रानी आई, हाथ जोड़ यह विनय सुनाई।।४०।।
शिष्य आपका मुझको चाहिए, नहीं तो प्रान न तन में रहिये।
सुनकर गुरुजी करुणा कीन्हीं, जाव तुम्हें यह आज्ञा दीन्हीं।।४१।।
रानी सङ्ग चले आयशु पाई, जाय महल में ध्यान लगाई।
रानी ने तब शीष नवाया, हुए अदृश्य भेद नहीं पाया।।४२।।

दोहा– मायारूपी आप ही, दादा मत्स्येन्दरनाथ।
रखूं चरण में आपके, करो कृपा मम नाथ।।४३।।

।। चौपाई ।।

जय जय जय श्रीदया के सागर, मत्स्य से प्रगट भये करूणाकर।
अमर कथा श्रीशिव ने सुनाई; गौरी के मन को जो भाई।।४४।।
सूक्ष्मवेद जो शिव ने सुनाया, मत्स्यगर्भ में आपने पाया।
जाकर आपने शीश नवाया, उमा महेश यह वचन सुनाया।।४५।।

जावो जगत का करो कल्याना, ले आशीष चले भगवाना।
सिंहल द्वीप का राज चलाया, सारे जग में यश फैलाया।।४६।।
कदलीवन में किया निवासा, योगमार्ग का किया प्रकाशा।
माया रूप से आप सुहावें, जग को अन्न धन वस्त्र पुरावें।।४७।।
दादा पद है आपका सुन्दर, करें कृपा निज भक्त जानकर।
महिमा आपकी अति घनेरी, कह न सकूं मन्दमति मेरी।।४८।।

दोहा– शिवगोरक्ष शिवरूप हैं, घट घट जिनका वास।
ज्योतिरूप में आपने, किया योगप्रकाश।।४९।।

।। चौपाई ।।

जय जय जय गोरक्ष गुरु ज्ञानी, योग क्रिया के तुम हो दानी।
बालरूप लघु जटा विराजे, भाल चन्द्रमा भस्म तन साजे।।५०।।
शिवयोगी अवधूत निरञ्जन, सुर नर मुनि सब करते वन्दन।
चारों युग के आप ही योगी, अजर अमर सुधारस भोगी।।५१।।
योग मार्ग का किया प्रचारा, जी असंख्य अभय कर डारा।
राजा कोटि निन्यानवे आये, देकर योग सब शिष्य बनाये।।५२।।
तुम शिव गोरक्ष राज अविनाशी, गोरक्षक उत्तरापथ वासी।
विश्वव्यापक योग तुम्हारा, नाथ पन्थ शिवमार्ग उदारा।।५३।।
शिव गोरक्ष के शरण जो आवे, होय अभय अमर पद पावे।
जो गोरक्ष का ध्यान लगावे, जरा मरण नहिं उसे सतावे।।५४।।

दोहा– माला यह नवनाथ की, कण्ठ करे जो कोय।
कृपा होय नवनाथ की, आवागमन न होय।।५५।।
नवनाथ माला रची, तुच्छ मती अनुसार।
त्रुटि क्षमा कर योगी–जन, कर लेना स्वीकार।।५६।।
नहिं विद्या में निपुण हूं, नहीं ज्ञान विशेष।
योगी जन गुरु पूज्य का, करता हूं आदेश।।५७।।

निर्गुण लीला

सतनमो आदेश! गुरु जी को आदेश! ॐ गुरु जी!

निर्गुण दाता हरता करता, सब जग विनशे आप न मरता। सदा सर्वदा अविचल होय–लेना इक न देना दोय–ऐसा मता सन्त का होय।।१।। निर्गुण सागर अपरम्पार, जाके तरंग बसे सकल संसार। उत्पति प्रलय वाही में होय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।२।। निर्गुण ब्रह्म लिखने सो न्यारा, पोथी पुस्तक भये अपारा। कोरे कागज लिख पड़ जाये–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।३।। घट–घट मांही नित्य निवास, कली–कली कीजे फुलवास। ऐ मन भोरा कर–कर जोय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।४।। कहां बताऊं रूप निशानी–ज्यों दर्पण में चमके पानी। निश्चल ब्रह्मा अश्चल होय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।५।। निर्गुण ब्रह्म अविचल देखा–शाखा पत्र रूप न देखा। छोटा मोटा कभी न होय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।६।। अलख पुरुष में देख्या दृष्टि–जो करना हो बाहू की पुष्टि। है निश्चय कर जाने जोय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।७।। जग में होता रूप न रेखा, न होय तिरिया न होय पुरुषा। बाला बूड़ा कभी न होय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।८।। ब्रह्म भवन में पुहकर भरिया–बिन पानी बिन सागर तरिया। सूरज कोटि उजियारा होय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।९।। बिन उस्ताद मिल्या ना कोय, मिल्या बिना न लेखा हो। लखते–लखते हलका होय

–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।१०।। जिस कारण मैं मुण्ड मुण्डाया–सो योगी मोहे कही न पाया आगा पीछा बैठा खोय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।११।। सो योगी गुरु सहजे पाया, आगा पीछा सभी बताया। जब ही सो बैठे होय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।१२।। पोथी पढ़–पढ़ भूले पण्डित, बहुत चलावहि वाद वितण्डित। पढ़ा घणा ते कुछ न होय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।१३।। सात समुद्र स्याही करता, धरती कागज कर पर धरता। इक अक्षर का जाप न होय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।१४।। निर्गुण सागर भरयो हक्का, तरते–तरते यह मन थक्का। तेरा पार न पाया कोय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।१५।। जिस अवधू का सकल पसारा, सो अवधू है सबसे न्यारा। उत्पत्ति प्रलय निशानी जोय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।१६।। कैसे जानूं काला धौला, सब घट मांही माणिक मौला। पांच रङ्ग से न्यारा सोय–लेना इक न देना दोय पूर्ववत्०।।१७।।

उपनिषदों में योग

द्विजसेवितशाखस्य श्रुतिकल्पतरोः फलम्।
शमनं भवतापस्य योगं भजत सत्तमाः।।

(विवेकमार्तण्डे, गोरक्षः)

योग–तत्त्वोपनिषद् में–ॐ योग तत्त्व का प्रवचन करेंगे–योगियों के हित की कामना से। उस योग–तत्त्व को सुनकर और पढ़कर सब पापों से मुक्त होता है।।१।।

विष्णु नामक महायोगी महामाया वाला महान् तपस्वी है, तत्त्व (योग) मार्ग में पुरुषोत्तम दीपक जैसा दिखाई देता है।।२।।

अ उ म् तीन अक्षरों के प्रान्त में जो आधा (म्) अक्षर का अध्ययन करता है, उसने यह सब पा लिया और वह परम पद भी प्राप्त कर लिया।।३।।

फूलों में जैसे गन्ध, दूध में जैसे घी, तिलों में जैसे तेल, पत्थर में जैसे सोना प्राप्त किया जाता है, वैसे ही पिण्ड ब्रह्माण्ड में योग–युक्तात्मा योगीनाथ ब्रह्म को प्राप्त करता है। निश्चित आत्मा सूक्ष्म योग सेवा से प्रत्यक्ष गोचर होता है इत्यादि आगे बहुत है।

योगशिखापनिषद् में–सब ज्ञानों में उत्तम योग शिखा का प्रवचन करेंगे साधक योगी जब मन्त्र ध्यान करता है तो गात्रकम्प नहीं होता।।१।।

पद्मासन बाँधकर अथवा रुचि अनुसार ८४ आसनों में से कोई भी आसन लगाकर, हाथ पाँव पद्म (कमल) के तुल्य कर संयम पूर्वक पौर्णिमा दृष्टि को नासाग्र में अटल कर, सब ओर से मन का प्रत्याहार

कर योगी ॐकार की चिन्ता करे। ऋतम्भरा प्रज्ञावाला प्राज्ञ योगी परमेष्ठी (परमपदस्थ नाथ ब्रह्म) को हृदय में धारण कर सतत ध्यान करता है।।२—३।।

मेरुदण्ड का एक ही थम्भा है, जिसमें सत्त्व रजस्तमः तथा वात पित्त कफ के ३ स्थूणा (सहायक खम्भे) हैं, जिसमें कान २ आँख २ नाक २ मुख १ पायु १ उपस्थ १ के नवद्वार हैं जिसमें प्राण अपान उदान समान व्यान ५ प्राण ही जिसमें देवता हैं, ऐसे शरीर रूपी मन्दिर में मतिमान् योगी अलक्ष्य आत्मा को उपलक्षित करे।

वह आत्मा आदित्यमण्डलरूपेण विद्यमान है, दिव्य है, रश्मियों की ज्वालाओं से सम्यक् आकुल है, उसके मध्य में अग्नि प्रज्वलित दीपक की बत्ती के तुल्य है।

दीपशिखा से जो मात्रा है, वह मात्रा परमेष्ठी (ब्रह्म) की है। पुनश्च योगी लोग योगाभ्यास से सूर्य का भी भेदन कर देते हैं।।६।। इत्यादि आगे बहुत है।

ध्यानबिन्दुपनिषद् में—यदि शैल समान पाप बहुत योजनों तक विस्तीर्ण हो तो भी ध्यान योग से उसका भेदन (नाश) किया जाता है, अन्य कोई उपाय कदाचित् नहीं है।।१।।

बीजाक्षर से परे बिन्दू है, बिन्दू से परे नाद है, शब्द सहित अक्षर के क्षीण हो जाने पर निश्शब्द परम पद है।।२।।

अनाहत जो शब्द (नाद) है, उस शब्द से भी जो परे है, जो योगी इसकी चिन्ता करे तो वह योगी छिन्नसंशय (संशय—रहित) हो जाता है।।३।। इत्यादि आगे अधिक है।

अमृत बिन्दूपनिषद् में—ॐकार के रथ पर आरुढ होकर विष्णु को सारथि बनाकर ब्रह्मलोक के पद का अन्वेषण करता हुआ योगी रुद्र (शिव) की आराधना में तत्पर होता है।।१।।

जहां तक रथ का पन्थ है, वहां तक रथ से जाना चाहिये, आगे रथ को त्याग कर योगी जाता है।।२।।

मात्रा लिंङ्गपद को त्याग कर शब्द व्यञ्जन से वर्जित स्वर रहित मकार द्वारा उस सूक्ष्म पद्म=पद (ब्रह्मरन्ध्रस्थ सहस्त्रदल कमलरूप गुरुनाथ ब्रह्म का पद=स्थान) को प्राप्त करता है।।३।।

योगी शब्द आदि विषय ५ अतिचञ्चल छठा मन, ये सब आत्मा के किरण है, ऐसा ध्यान कर अन्तर्मुख करे, वह प्रत्याहार है।।४।।

प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान तर्क समाधि यह षडङ्गयोग कहा जाता है।।५।। यहां से आरम्भ कर— ।

इस विधि से सम्यक् नित्य योग का क्रमशः अभ्यास करते हुए योगी का आत्मज्ञान तीन मासों में स्वयं उत्पन्न होता है, इसमें संशय नहीं है।।६।। इत्यन्त पर्यन्त बहुत है।

नादबिन्दु उपनिषद् में—एवं इस हंसयोग (हंसः सोऽहं ओहॐक्रमेण शब्द ब्रह्म से परब्रह्म में लय करने वाला अजपा क्रमिक हठादि अमनस्क पर्यन्त महाहंसयोग) में आरुढ़ विचरण=विद्वान् योगी कर्म करता हुआ संसार में विचरण करे तो कर्म बन्धन में नहीं पड़ता और शतशः कोटिशः पाप ताप योगी को छू नहीं सकते।।१।।

योगाचार (यौगिक चर्या) से सुस्थित, सब प्रकार के सङ्ग से वर्जित योगी अष्ट पाशों से मुक्त होकर विमल केवल प्रभु (समर्थ कर्तु,

अकर्तु अन्यथा कर्तु शक्त ईश्वर) होता है।।२।। उसी ब्रह्म भाव से परम आनन्द प्राप्त कर विदेह मुक्त हो जाता है। इत्यादि बहुत है।

शिखोपनिषद् में—सब कुछ ॐकार के अन्तर्गत है, सर्व ज्ञान से सब योगध्यानों में शिव ही एक ध्येय हैं, शिवशङ्कर (कल्याणकारी) है, और सबका परित्याग करो। इत्यादि आगे बहुत है।

क्षुरिक्षोपनिषद् में—जैसे निर्वाण काल में (बुझते समय) तो दीपक तेल वाती सबको दग्ध कर लीन होता है, वैसे ही निर्वाण—काल में (नाद ब्रह्म में लीन होते समय) योगी सम्पूर्ण कर्मों को भस्मसात कर लय (लय योग द्वारा ब्रह्म में लीन) को प्राप्त करता है। इस प्रकार अमनस्क महायोग से ब्रह्मलीन होते समय योगी सिद्ध विचारनाथ (महाराजाधिराज भर्तृहरि) के शब्दों में विनम्र प्रार्थना करता है—

मातर्देदिनि! तात! मारुत! सखे! तेजः! सुबन्धो! जल!

भ्रातर्व्योम! निबद्ध एष भवतामन्त्यः प्रणामाञ्जलिः!

युष्मत्सङ्गवशोपजातसुकृतोद्रेकस्फुरन्निर्मल—

ज्ञानापास्तसमस्तमोहमहिमा लीये परे ब्रह्माणि!

बृहदारण्यक उपनिषद् में—योगी याज्ञवल्क्य कहते हैं—ब्रह्म के दो रूप हैं, मूर्त तथा अमूर्त। मर्त्य तथा अमृत, स्थिर तथा चर, सत् तथा त्यत् (वह)।।१।। वह यह मूर्त है जो वायु से भिन्न है अन्तरिक्ष से भिन्न है, यह मर्त्य है, यह स्थित है यह सत्य है।।२।। उस इस मूर्त का, इस मर्त्य का, इस स्थित का, इस सत् का यह रस है जो यह तपता है सत् का ही यह रस (आनन्दमय आत्मा ब्रह्म है)।।३।।

अब अमूर्त—वायु तथा अन्तरिक्ष यह अमृत यही सत्य है।।४।। उस इस अमूर्ता का, इस अमृत का, इस गतिशील का इस उसका रस जो यह इस (सूर्य) मण्डल में पुरुष है, उसका यह रस है। इत्यादि अजिदैवत हुआ।

जब अध्यात्म—यही मूर्त है, जो अन्य प्राण से जो यह अन्तरात्मा आकाश में यह मर्त्य यह स्थित यह सत् है।।५।। उस इस अमूर्त का इस मूर्त का इस स्थित का इस सत्त का यह रस है, जो चक्षु सत् का यह रस है।।६।।

अब मूर्त—प्राण वायु यह अन्तरात्मा में आकाश यह अमृत यह जो इस अमूर्त का।।७।। इस अमृत का इस आने वाले जाने वाले स्थिर चर उसका यह रस जो यह दक्षिण अक्षि में पुरुष है, उसका ही यह रस है।।८।। उस इस पुरुष का रूप जैसे महारजन (कौसुम्भ) वस्त्र जैसा शुक्ल कम्बल जैसा इन्द्रगोप (अग्निकीट) जैस अग्निशिखा जैसे पुण्डरीक (शुक्ल कमल) जैसे सत् विद्युत (शुभ बिजली) उस एक बार विद्योतमान वे बहुत हैं, जो इस प्रकार जानता है, उस की श्री (शोभा—सम्पत्ति—तथा मोक्षश्री) होती है।।९।।

अब यहां से आदेश (आत्मा=ब्रह्म=नाथतत्व) है, इससे परे नं इति—२ इससे परे कुछ नहीं है। अब नामधेय सत्य का सत्य प्राण ही सत्य है, उनका यह सत्य है। इत्यादि आगे बहुत है।

स्मृतियों में योग—

मनुस्मृति में—आफर में फूके जाते धातुओं के मल जैसे दग्ध हो जाते हैं, वैसे ही प्राणायाम से इन्द्रियों के दोष दग्ध होता है।।१।। उच्चावच (छोटे—बड़े) जीवों में अयोगी लोगों के लिये दुर्ज्ञेय इस

अन्तरात्मा की गति को योगी ध्यानयोग से देखता है!।।२।। इत्यादि बहुत है।

याज्ञवल्क्यस्मृति में—यज्ञ आचार दम अहिंसा दान स्वाध्याय आदि कर्मों में यह तो परम धर्म है, जो योग से आत्मदर्शन करना है।।१।। हजारों जातियों में जन्म, प्रिय अप्रिय आदि द्वन्दों का विपर्याप्त होता। किन्तु ध्यानयोग से सम्यक् योगी सूक्ष्म आत्मा को आत्मा में स्थित देखता है।।२।। योगी याज्ञवल्क्य महर्षि कहते हैं—मेरा बनाया हुआ योगशास्त्र योग की अभिलाषा रखने वाले को जानना चाहिये। देही निज देह में सर्वाश्रया वेदना को जानता है। (आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्)।।३।। किन्तु योगी विदेह—मुक्त होना है, जो सर्व वेदनाओं से रहित हो जाता है। तत्त्वस्मृति उपस्थित हो जाती है। सत्त्वयोग से सर्व दोषों का परिक्षय हो जाता है!।।४।। कर्मों के सन्निधान से (जन्म जनमान्तर के पुण्यपुन्ज के निकट आने से) सन्तों का योग होता है। योग सिद्ध हो जाने पर स्वेच्छा से योगी देह त्याग भी कर देवे तो अमृतत्व (कैवल्यमुक्ति पद) के लिये कल्प (शक्त=समर्थ) होता है। इत्यादि बहुत स्मृतियों में बहुधा योग की महिमा है।

इत्यं श्रुति—स्मृति—पुराण—मुखाऽऽगमेषु,
योगोऽस्ति योगिमहिमास्ति विदन्ति सन्तः।
दिग्दर्शनं त्विदमनूदितवान् नृसिंहः,
शाके नवाष्टचसुभूयुजि नागपुर्याम्।।१।।

सिद्ध धोरमनाथ चालीसा

दोहा– श्री गुरु गणपति शारदा सिद्ध श्री धोरमनाथ।
शेष महेश वन्दन करे जोड़ के दोनों हाथ।।

।। चौपाई ।।

जै श्री धोरमनाथ धुरन्धर, कही न तपस्या करी सिद्धेश्वर।
पाटन नगरी निकट निवासा, शुद्ध भूमि एकान्त निवासा।
बारह वर्ष की लगी समाधि, रही नहीं कुछ आदि व्याधि।
सिद्ध गरीब थे आज्ञाकारी, आश्रम की करते रखवारी।
अवधि वर्ष बारह की बीती, खुली समाधि भई प्रतीति।
सिद्ध गरीब पड़े तब चरणे, मस्तक से कीड़े लगे गिरने।
नाथ गरीब की देख दुर्दशा, क्रोध हृदय में आकर बसा।
बोले वत्स कहो सब कारण, मौन किया क्यों तुमने धारण।
सुन बस्ती की निष्ठुरताई, रोम–रोम अग्नि प्रगटाई।
तुरत ही कर खप्पर लीन्हों, पट्टन सो डट्टन कर दीना।
माया सब मिटी भई तब ही, खप्पर उलट दिया गुरु जब ही।
पाटन छोड़ कछ में आये, धीरणोधर पर्वत नियराये।
चढ़ने लगे जब शिखर के ऊपर, कंपन लाग्या पर्वत थरथर।
मुख से तब यह गिरा उच्चारी, कोढ़ी ठहर क्यों हिम्मत हारी।
शब्द बाण पर्वत को मारा, कुष्ट हो गया पर्वत सारा।
अकथ अथाह आपकी शक्ति, जानो श्रेष्ठ योग की युक्ति।
शान्त हुआ तब पर्वत डरकर, चढ़कर पहुंचे आप शिखर पर।
तप कठारे स्व हृदय विचारी, शीर्षासन की करी तैयारी।
शीश तले रख लोह सुपारी, बारह वर्ष बिताये भारी।

बारह वर्ष बीत गये जब ही, सिद्ध अनेक आये ढिग तब ही।
करी बिनती खुली समाधी, भक्तजनों की मिट्टी उपाधी।
खुले नेत्र प्रगटी तब ज्वाला, समुद्र बारह कोष में जाला।
अति विचित्र आपकी गाथा, बारम्बार नमाऊं माथा।
करो कृपा मो पर गुरु ज्ञानी, नाथ बालको अनाथ जाणी।
पापी अधम दुष्ट मैं गुरुवर, नाथ आपका हूं पद किंकर।
दास जान गुरु मोहि अपनाओ, अवगुण मोर हृदय नहीं लाओ।
पर्वत से उतरे योगेश्वर, चिलम पिये जल नहीं यहाँ पर।
पत्थर में चिपीया इक मारा, प्रगटी शुद्ध गङ्ग की धारा।
सिद्ध वीरड़ी नाम है उसका, यात्री गण जल पीते जिसका।
एक रचा सुन्दर भण्डारा, जानत है सचराचर सारा।
नभ से डेगें आप उतारी, गंगा यमुना नाम पुकारी।
पूजा आज भी उनकी होती, धीरणोधर में जलती ज्योति।
शक्ति आपकी अपरम्पारा, वर्णत बाल होत लाचारा।
करो कृपा गुरु शरणागत पर, दया करो हे नाथ दयाकर।
मैं बालक हूं तुच्छ आपका, भय मेटो मम त्रिविध ताप का।
मेटो कष्ट शुद्ध करो काया, शरणागत मैं शरण में आया।
मैं हूँ अधम नीच अति पापी, आशा तृष्णा अतिशय व्यापी।
काम क्रोध मद मोह सतावे, लोभ क्षोभ मोहे अति दूर पावे।
बालक को गुरु अभय बना दो, दया श्रोत्र हे नाथ बहा दो।
नाथ त्रिलोक की सुनिये प्रार्थना, बारम्बार करूँ मैं वन्दना।

दोहा– चालीसा श्री नाथ की पाठ करे नित जोय।
धोरमनाथ कृपा करे मनवांछित फल होय।।

श्री गुरु कन्थड़नाथ चालीसा

दोहा– सत्गुरु गणपति शारदा, समर्थ कंथड़नाथ।
कृपा करो मुझ बालक पर, गाऊँ शुभ यश गाथ।।

।। चौपाई ।।

जय श्री कंथड़ नाथ निरञ्जन, भव तारण भव भय दुःख भंजन।
ऋद्धि सिद्धि के आप हो स्वामी, आदि पुरुष अन्तरयामी।।
गजबेली गणपति कंथड़ देवा, सुर नर मुनि सब करते सेवा।
शीश मुकुट अति सुन्दर सोहे, दर्शन कर त्रिभुवन जग मोहे।।
गल विच सेली नाद विराजे, रूप देख काल डर भागे।
जगहित कन्थ कोट प्रभु आये, चमत्कार बहु भाँति दिखाये।।
नरपति तुम चरणों का चाकर, सप्तद्वीप नवखण्ड उजागर।
सन्त भक्त के हो रखवारे, योगी जन को हो अति प्यारे।।
जब–जब विपत पड़े भक्तन पर, दया करो तब आप विघ्न हर।
पल में संकट दूर नशावो, शरणागत की लाज बचाओ।।
समरथ कंथड़ नाथ गोसाई, दीनन के प्रभु होत सहाई।
शिष्य चार पर कृपा कीनी, अष्ट सिद्धि नवनिधि उन्हें दीनी।।
अजर अमर की उनकी काया, घट में ब्रह्म ज्योति दर्शाया।
वसुनाथ पर कृपा तुम्हारी, करी तपस्या कूवें में भारी।।
रामनाथ जी जग विख्याता, पर्वत काग नोर प्रख्याता।
पवननाथ जी पवन आहारी, जो याचे पावे फल चारी।।
कुँवरनाथ योगी सिद्धेश्वर, जरा मरण जिनके पद किंकर।
ऐसे समर्थ शिष्य आपके, पल में टारत अंक भाल के।।

मुझ गरीब पर करूणा करिये, दो आशीष दुःख सब हरिये।
करी कृपा हे नाथ कृपालु, दया के सागर आप दयालु।।
कंथड़ नाथ हरो दुःख मेरा, लक्ष चौरासी फिरा मैं फेरा।
भव सिन्धु से पार उतारो, बालक जानि नाथ मोह तारो।।
काम क्रोध मद मोह सतावे, आशा तृष्णा मोहि डरावे।
करो कृपा मो पर गुरु ज्ञानी, छूटे बन्दी होय नहीं हानी।।
नाथ अनाथ की लाज बचावो, दीन जानि गुरु मोहि अपनावो।
अजपा जाप जपूँ हमेशा, माँगत हौं यह भीख सुरेशा।।
मैं भिक्षुक दाता तुम मेरे, करो क्षमा अपराध घनेरे।
कोटिक जो अपराध हमारे, नाथ हृदय नहीं धरो तुम्हारे।।
करो कृपा मेटो यम फाँसी, नाम तुम्हार जपो अविनाशी।
कंथड़ नाथ गुरु सिद्धेश्वर, कंथ कोट तप तपे योगेश्वर।।
कोटि भक्त के काज सुधारे, भव सिन्धु से पार उतारे।
माँगू पर्वत गुहा तुम्हारी, संग रहे भैरव बलकारी।।
आदि शक्ति तुम ढिंग चली आई, पर्वत पर बैठी महामाई।
चमत्कार बहु भाँति दिखाये, सिद्धों के सिर आज कहाये।।
विनती सुनो नाथ अब मोरी, काटो कालपाश की डोरी।
मैं अनाथ तुम नाथ हमारे, तुम बिन दूसर कौन उबारे।।
प्रभु दर्शन की लागी आशा, हृदय बीच गुरु करो निवासा।।
जब लग जिऊँ दया फल पाऊँ, गुण तुम्हार निशिवासर गाऊँ।।
कंथड़नाथ सुनो मम बिनती, दीजे शक्ति योग और युगति।
नाथ त्रिलोक है शरण तुम्हारे, करो कृपा हरो विघ्न हमारे।।

दोहा– चालीसा श्रीनाथ का पठन करे नित जोय।
कंथड नाथ कृपा करे मनवांछित फल होय।।

।। नवदुर्गा स्तुति ।।

जगत्पूज्ये जगत्वंद्ये सर्वशक्ति स्वरूपिणी।
सर्वात्मि केशि कौमारीं जगन्मातर्नमोस्तुते।। शैलपुत्री
त्रिपुरां त्रिगुणाधारां मार्गज्ञान स्वरूपिणीम्।
त्रैलोक्यं वन्दितां देवीं त्रिमूर्ति प्रणमाम्यहम्।। ब्रह्मचारिणी
कालिकांतु कलातीतां कल्याण हृदयां शिवाम्।
कल्याण जननीं नित्यं कल्याणीं प्रणमाम्यहम्।। चन्द्रघण्टा
अणिमादि गुणौदारां मकराकार चक्षुषम्।
अनन्त शक्ति भेदां तां कामाक्षीं प्रणमाम्यहम्।। कूष्ठमाण्डा
चण्डवीरां चण्डमायां चण्डमुण्ड प्रभञ्जनीम्।
तां नमामि च देवेशीं चण्डिकां चण्डविक्रमाम्।। स्कन्धमाता
सुखानन्द करीं शान्तां सर्वदेवैर्नभस्कृताम्।
सर्वभूतात्मिकां देवीं शाम्भवीं प्रणमाम्यहम्।। कात्यायनी
चण्डवीरां चण्डमायां रक्तबीज प्रभञ्जनीम्।
तां नमामि च देवेशीं गायत्री गुण शालिनीम्।। कालरात्रि
सुन्दरी स्वर्णसर्वाङ्गी सुख सौभाग्य दायिनीम्।
सन्तोष जननीं देवीं सुभद्रां प्रणमाम्यहम्।। महागौरी
दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भय दुःख विनाशिनी।
प्रणमामि सदाभक्त्या दुर्गा दुर्गति नाशिनीम्।। सिद्धदात्री
आकार ब्रह्मरूपेण ॐकारं विष्णुमव्ययम्।
सिद्धि लक्ष्मि परालक्ष्मिः लक्ष लक्ष्मिः नमोऽस्तुते।।

या: श्री: पद्मवने कदम्बशिखरे राजगृहे कुञ्जरे।
श्वेते चाऽश्व युत् वृषे च युगले यज्ञे च यूपस्थिते।
शङ्खे देवकुले नरेन्द्र भवने गङ्गातटे गोकुले।
या श्रीस्तिष्टति सर्वदा मम गृहे भूयान् सदा निश्चला।
या सा पद्मासनस्था विपुल कटतटी पद्मपत्रा यताक्षी।
गम्भीरावर्तनाभि: स्तनभरनमिता शुद्ध वक्त्रोतमीया।
लक्ष्मीर्दिव्यै गजेन्द्रैर्मणिगण खचितै: स्नापिता हेम कुम्भे।
नित्यं सा पद्महस्ता मम् वसतु गृहे सर्व मांगल्य युक्ता:।

।। सिद्ध लक्ष्मी स्तुति: ।।

अथ ज्वाला काली सप्तवार स्तुति

मंगल की सेवा सुन मेरी देवा हाथ जोड़ तेरे द्वार खड़े।
पान सुपारी ध्वजा नारियल ले ज्वाला तेरी भेंट धरे।
सुन जगदम्बे! न कर बिलम्बे सन्तन के भण्डार भरे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली जै काली कल्याण करे।।१।।
बुद्धि विधाता तूं जगमाता तैं मेरे कारज सिद्ध करे।
चरण कमल का लिया आसरा शरण तुम्हारी आन पड़े।
जब–जब भीड़ पड़ी भक्तन पर तब–तब आय सहाय करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली जै काली कल्याण करे।।२।।
वीर वार तैं सब जग मोह्यो तरुणी रूप अनूप धरे।
माता होकर पुत्र खिलावे कहीं भार्या भोग करे।
तुम्हरी महिमा किस मुख बर्णू बैठी कारज आप करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली जै काली कल्याण करे।।३।।

शुक्र सुखदाई सदा सहाई सन्त खड़े जयकार करे।
ब्रह्मा विष्णु महेश फल लिये भेंट देन तेरे द्वार खड़े।
अटल सिंहासन बैठी माता सिर सोने का छत्र फिरे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली जै काली कल्याण करे।।४।।
वार शनिश्चर कुंकुम बर्णी लोकड़ वीर को हुक्म करे।
खड़ग खप्पर त्रिशूल हाथ लिये रक्त बीज को भस्म करे।
शुम्भ निशुम्भ क्षणहि में मारे महिषासुर का संहार करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली जै काली कल्याण करे।।५।।
ऐतवार तुम आदि क्वारी जन अपने के कष्ट हरे।
कुपित होकर दानव मारे चण्ड मुण्ड सब चूर करे।
जब तुम देखो दया रूप से पल में संकट दूर करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली जै काली कल्याण करे।।६।।
सोम स्वभाव धर्‌यो मेरी माता जन की अर्ज कबूल करे।
सिंह पीठ पर चढ़ी भवानी अटल भवन में राज करे।
दर्शन पावें मंगल गावें सिद्ध साधक तेरी भेंट करें।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली जै काली कल्याण करे।।७।।
ब्रह्मा वेद पढ़े तेरे द्वारे शिव शङ्कर हरि ध्यान धरे।
इन्द्र कृष्ण तेरी करें आरती चँवर कुवेर डुलाय करे।
जय जननी जय मातु भवानी अटल भवन में राज करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली जै काली कल्याण करे।।८।।
सात बार की महिमा बरणू माँ की महिमा अति भारी।
चन्द्र सूरज तपे तेज से तेरे तेज की बलिहारी।
सुख धन देने वाली माता एक पलक में निहाल करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली जै काली कल्याण करे।।९।।

पंच देवी स्तुति

उमा ऊषा च वैदेही राम गङ्गेति पंचकम्।
प्रातरेव स्मरेन्नित्यं सौभाग्यं वर्द्धते सदा।।

गंगा स्तुति

शैलेन्द्रादव तारिणीं निज जले मज्जज्जनातारिणीम्।
पारावार विहारिणीं भव भय श्रेणी समुत्सारिणीम्।
शेषा हेरनु कारिणीं हर शिरो वल्लोदला कारिणीम्।
काशी प्रान्त विहारिणीं विजयते गङ्गा मनोहारिणीम्।।

पंचकन्या स्तुति

अहिल्या द्रोपदी तारा कुन्ती मन्दोदरी तथा।
पञ्चकन्याः स्मरेन्नित्यं महापातकनाशनम्।।

शनि स्तुति

कोणस्थं पिङ्गलो बभ्रुः कृष्णो रौन्द्रान्तको यमः।
सौरि शनिश्चरो नन्दः पिप्पलाश्रयं संस्थितः।।१।।
एतानि शनि नामानि जपेदश्वत्थ सन्निधौ।
शनैश्चर कृता पीड़ा न कदापि भविष्यति।।२।।

शनि पत्नी नाम स्तुति

ध्वजिनी धामनी चैव कंकाली कलह प्रिया।
कण्टकी कलही चाऽथतुरङ्गी महिषी अजा।।१।।
शनैर्नामानि पत्नी नामेतानि सञ्जपन् पुमान्।
दुःखानि नाशयेन्नित्यं सौभाग्यं मेघते सुखम्।।२।।

सप्तर्षि स्मरणम्

कश्यपोऽत्रिभरद्वाजो विश्वामित्रोऽथ गौतमः।
जमदग्नि र्वसिष्टश्च सप्तैते ऋषयः स्मृताः।।
तेषां वंशानुर्वशानां वेद मन्त्रस्य द्रष्टुणाम्।
संस्मरामि सदा भक्तया धर्म मार्ग प्रदर्शकान्।।

सप्त चिरंजीवि स्तुतिः

अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनुमांश्च विभीषणः।
कृपा परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः।।।१।।
सप्तैतान् स्मरेन्नित्यं मार्कण्डेय मथाष्टमम्।
जीवेद वर्षशतं सोऽपि सर्वव्याधि विवर्जितः।।२।।

हकारादि पंच देव स्तुति

हरं हरि हरिश्रन्द्रं हनुमन्तं हलायुधम्।
पंचकं हि स्मरेन्नित्यं घोर संकट नाशनम्।।

दुःस्वप्न नाशनदेव स्मरणम्

अविमुक्त—चरण युगलं दक्षिण मूर्तेश्च कुक्कुट चतुष्कम्।
स्मरणं वारणस्यां निहन्ति दुःस्वप्नमशकुनं च।।

दुःस्वप्न नाशन सूर्य स्तुति

आदित्यः प्रथमं नाम द्वितीयं तु दिवाकरः।
तृतीयं भास्करः प्रोक्तं चतुर्थं च प्रभाकरः।।१।।
पञ्चमंच सहस्रांसुः षष्टं चैव त्रिलोचनः।
सप्तमं हरिदश्च अष्टमं च विभावसुः।।२।।
नवमं दिनकृतं प्रोक्तं दशमं द्वादशात्मकः।
एकादशं त्रयीमूर्तिर्द्वादशं सूर्य एव च।।३।।
द्वादशैतानि नामानि प्रातःकाले पठेन्नरः।
दुःस्वप्न नाशनं सद्यः सर्वसिद्धि प्रजायते।।४।।

।। पाठ विधि और आदेश ।।

कर स्नान शुद्ध प्राणायाम करे बैठ कर,
आम पीपल आदि की समिधा जलाइये।
धूनि की पूजा कर प्रेम सहित गोकुल धूप करे,
नवनाथ माला का पाठ नित्य सुनाइये।
एक सौ आठ बार माला पठन करे,
नवनाथ माला प्रेम से फिराइये।
अष्ट सिद्धि नव निधि मुक्ता फल प्राप्त हो,
माला के प्रताप से मोक्ष फल पाइये।
माला नवनाथ की प्रेम से पठन करो,
काम क्रोध मद मोह दूर भाग जायेंगे।
आशा और तृष्णा निकट नहीं आयेंगे,
जरा मरण आधि व्याधि तुम्हें न सतायेंगे।
नवनाथ माला के पठन प्रभाव से,
भूत प्रेत चोर आदि कभी न डरायेंगे।
बाल ये त्रिलोक नवनाथ के आशीष से,
होयेगी जो इच्छा शीघ्र वही फल पायेंगे।

❊

पुस्तक सूची (हरिद्वार से प्रकाशित)	लेखक/संचालक	मूल्य
8. श्री प्राचीन भर्तृहरी गुफा महात्म्य (देश-विदेश के नाथ सिद्धों के तीर्थ स्थलों के पते/ विवरण)	योगी विलासनाथ जी पुजारी	50/-
9. श्री गोरक्ष नाथ सिद्ध चालीसा (सरल हिन्दी अनुवाद स्तुति एवं आरती विधि सहित)	योगी विलासनाथ जी पुजारी	6/-
10. श्री गोरक्ष तंत्रम् (सरल हिन्दी अनुवाद तंत्र-मंत्र विधि)	योगी विलासनाथ जी पुजारी	70/-
11. श्री नाथ सिद्धों की ॐकार सिद्धि (उपासना-साधना)	योगी विलासनाथ जी पुजारी	50/-
12. श्री नाथ सम्प्रदाय आरती-भजन संग्रह	योगी विलासनाथ जी पुजारी	45/-
13. श्री नाथ सिद्धों के मंत्र-तत्र टोटके	महावीर सैनी (गुरु योगी विलासनाथ जी पुजारी)	150/-
14. योगी सम्प्रदाय नित्यकर्म संचय	योगी भंभूलनाथ जी	30/-
15. गोरक्ष स्तवांन्जलि	योगी भंभूलनाथ जी	15/-
16. श्री गोरक्ष सहस्त्र नाम स्तोत्र	योगी भंभूलनाथ जी	36/-
17. शब्दावली व भजन	योगी भंभूलनाथ जी	10/-
18. गुरु गोरक्षनाथ शब्दावली (भजन)	महन्त सेवानाथ जी	15/-
19. अनुभव भजन माला	भोलानाथ जी योगी	10/-
20. भर्तृहरि निर्वेदनाटकम्	महाकवि हरिहर रचित	5/-
21. श्री नाथ चरित्र	योगी वीरनाथ जी	70/-
22. सिद्ध प्रयोग चिकित्सा	योगी वीरनाथ जी	8/-
23. श्री बाबा मस्तनाथ चरित्र	योगी शंकरनाथ जी	20/-

पुस्तक सूची (हरिद्वार से प्रकाशित)	लेखक/संचालक	मूल्य
24. अस्थल बोहर मठ का संक्षिप्त इतिहास	योगी शंकरनाथ जी	100/-
25. श्री बाबा मस्तनाथ कथा	रामेश्वरनाथ जी	15/-
26. चन्द्रावतार सिद्ध चौरंगीनाथ (पूरण भगत)	शिवानी शर्मा	35/-
27. दिव्य भूमि मठ अस्थल बोहर एवं पूजनीय गुरुदेव	शिवानी शर्मा	100/-
28. श्री सिद्ध बाबा मस्तनाथ चालीसा	शिवानी शर्मा	10/-
29. श्री बाबा मस्तनाथ सहस्त्र नाम	शिवानी शर्मा	20/-
30. श्री मस्तनाथ चरितम् (बड़ी)	डॉ. सौभाग्यवती नान्दल	100/-
31. श्री मस्तनाथ चरितम् (छोटी)	डॉ. सौभाग्यवती नान्दल	30/-

पुस्तक सूची (गोरखपुर से प्रकाशित)	लेखक/संचालक	मूल्य
32. गोरखबाणी	रामलाल श्रीवास्तव	50/-
33. गोरख चरित्र	रामलाल श्रीवास्तव	30/-
34. गोरख दर्शन (हिन्दी फिलॉसफी)	अक्षय कुमार बेनर्जी	90/-
35. गोरख दर्शन	विजय पाल	50/-
36. श्री नाथ सिद्ध चरितामृत	रामलाल श्रीवास्तव	30/-
37. गोरक्षनाथ एवं उनकी परंपरा का साहित्य	डा. दिवाकर पाण्डेय	40/-
38. आदर्श योगी	अक्षय कुमार बेनर्जी	25/-
39. योगासन	रामलाल श्रीवास्तव	30/-
40. सिद्ध सिद्धान्त पद्धत	रामलाल श्रीवास्तव	35/-
41. गोरक्ष सिद्धान्त संग्रह	रामलाल श्रीवास्तव	40/-
42. हटयोग प्रदीपिका	रामलाल श्रीवास्तव	35/-
43. योग बीज	रामलाल श्रीवास्तव	15/-
44. नाथ योग	अक्षय कुमार बेनर्जी	15/-

पुस्तक सूची (गोरखपुर से प्रकाशित)	लेखक/संचालक	मूल्य
45. अमनस्क योग	अक्षय कुमार बेनर्जी	20/-
46. गोरक्ष पद्धति	रामलाल श्रीवास्तव	20/-
47. गोरक्ष शतक	रामलाल श्रीवास्तव	20/-
48. वैराग्य शतक	रामलाल श्रीवास्तव	20/-
49. गौरक्ष वैदिक पूजा पद्धत	वेदाचार्य रामानुज त्रिपाठी	20/-
50. विचार दर्शन	योगी आदित्यनाथ	20/-
(युग पुरुष महन्त दिग्विजय नाथ...ने कहा)		
51. प्रताप असी बावणी (कविता संग्रह)	मनोहर द्विवेदी	15/-
52. योगवाणी अंक (गोरखबाणी)	गोरखनाथ मन्दिर	25/-
53. योगवाणी (गोरक्ष चरित्र दर्शन)	गोरखनाथ मन्दिर	15/-
54. योगवाणी (नाथ सिद्ध चरित्रांक)	गोरखनाथ मन्दिर	40/-
55. योगवाणी (शिव संहिता)	गोरखनाथ मन्दिर	25/-
56. योगवाणी (सिद्ध दर्शन)	गोरखनाथ मन्दिर	15/-
57. योगवाणी (नाथ तीर्थ स्थल)	गोरखनाथ मन्दिर	25/-
58. योगवाणी (नाथ सिद्ध बानी)	गोरखनाथ मन्दिर	25/-
59. योगवाणी (गोरक्ष सिद्धान्त)	गोरखनाथ मन्दिर	25/-
60. योगवाणी (गोरक्ष ग्रन्थावली)	गोरखनाथ मन्दिर	25/-
61. योगवाणी (मत्स्येन्द्रनाथ अंक)	गोरखनाथ मन्दिर	25/-
62. योगवाणी (सर्व धर्म समभाव)	गोरखनाथ मन्दिर	25/-
63. योगवाणी (राष्ट्रीय एकता)	गोरखनाथ मन्दिर	25/-
64. योगवाणी (विशेषांक 1994)	गोरखनाथ मन्दिर	15/-

❖❖❖❖

श्री नाथ सिद्ध यन्त्र

(विधि विधान द्वारा सिद्ध किये हुये)

साईज	ताम्बा (मूल्य)	तांबा (सिल्वर पॉलिश) मूल्य
3× 3 इंच	50/–	60/–
5×5 इंच	70/–	80/–
7×7 इंच	90/–	110/–
9×9 इंच	300/–	325/–
12×12 इंच	425/–	450/–

कैमरा फोटोग्राफ

गुरु गोरक्षनाथ, बाबा मस्तनाथ, बाबा सुन्दरनाथ, बाबा बालकनाथ, रतननाथ, नवनाथ, भैरव, ज्वालाजी, मृत्युंजय आदि सभी नाथ सम्प्रदाय-प्रासंगिक (चरित्रनुरुप) कैमरा फोटो

साईज	कैमरा फोटो	लेमिनेटेड फोटो फ्रेम
छोटे फोटो P / C = 5 " X 3.5"	5/–	–
बड़े फोटो B / C = 7 " X 5"	10/–	35/–
नवनाथ स्वरुप B / C = 7 " X 5"	10/–	35/–
आगे आगे गोरख जागे BB / C = 10 " X 5"	25/–	
बड़ा फोटो B,B,B / C = 10 " X 8 "	35/–	–

MP3-DVD-VCD (सी.डी.)

		MP3	DVD VCD
अमृतांजलि (भाग-1) गोरक्ष चालीसा, भजन इत्यादि	गायक-सोमनाथ शर्मा	35/–	50/-
अमृतांजलि (भाग-2) चौरासी सिद्ध चालीसा, भजन इ०	भजन रचना-योगी विलासनाथ	35/-	50/-
श्री नाथ सिद्ध पाठ भजन (भाग-1+2)	रचना-योगी विलासनाथ	80/–	100/-
श्री गोरक्ष वन्दना, भजन	रचना-योगी विलासनाथ	35/–	50/-
श्रीनाथ सिद्ध कवचम् (अंग्रेजी) कम्प्यूटर फ्लॉपी	रचना-योगी विलासनाथ	45/–	

कैलेण्डर फोटो

विवरण	साईज	कैलेण्डर फोटो	लेमिनेटेड फोटो फ्रेम
गुरु गोरक्षनाथ जी (मृगस्थली)	20 " X 14 "	25/-	160/-
गुरु गोरक्षनाथ जी (ब्रह्माण्ड)	22 .5" X 17. 5 "	25/-	160/-
गुरु गोरक्षनाथ जी (मृगस्थली)	14 " X 9 "	15/-	80/-
गुरु गोरक्षनाथ जी (मृगस्थली)	10 " X 7 "	10/-	40/-
गुरु गोरक्षनाथ जी (मृगस्थली)	7 " X 5 "	5/-	25/-
आगे-आगे गोरख जागे	16.5 " X 39. 5 "	30/-	225/-
बाबा मस्तनाथ जी	7 " X 5 "	3/-	25/-
बाबा मस्तनाथ जी	30 " X 17 "	10/-	-
श्री नवनाथ स्वरुप दर्शन	22 .5" X 17. 5 "	25/-	225/-
पोस्टकार्ड साईज फोटो	5"X3.5"	3/-	-

यन्त्र- (आर्ट पेपर पर रंगीन प्रिन्टेड)

यन्त्र विवरण	आर्ट पेपर पर प्रिन्टेड	लेमिनेटेड फोटो फ्रेम
श्री नाथ सिद्ध यन्त्र	10/-	70/-
सर्वतो महारुद्र नवनाथ चौरासी सिद्ध यन्त्र	10/-	70/-
श्री नाथ सिद्ध योगिनी यन्त्र	10/-	70/-
धरत्री गायत्री यन्त्र	10/-	70/-
उपरोक्त चारों यन्त्रों का सैट	40/-	300/-

कैसेट

गुरु गोरक्षनाथ चालीसा (भाग 1)	गायक - सोमनाथ शर्मा	30/-
चौरासी सिद्ध चालीसा (भाग 2)	गायक -सोमनाथ शर्मा	30/-
श्रीनाथ सिद्ध पाठ (भाग 1)	रचना-योगी विलासनाथ, गायक- अभिजीत	35/-
श्रीनाथ सिद्ध पाठ (भाग 2)	रचना-योगी विलासनाथ, गायक- अभिजीत	35/-
श्री गोरक्ष वन्दना (भाग 1)	रचना-योगी विलासनाथ, गायक- अभिजीत	35/-
श्री गोरक्ष वन्दना (भाग 2)	रचना-योगी विलासनाथ, गायक- अभिजीत	35/-
बाबा मस्तनाथ चमत्कार एवं महिमा भजन(1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9 भाग)		प्रत्येक 25/-
अन्य नाथ सम्प्रदाय की भजन कैसेटें		35/-

लॉकेट, चाबी-छल्ले, कुण्डल इत्यादि

विवरण	मूल्य
लॉकेट (गुरु गोरक्षनाथ जी एवं बाबा मस्तनाथ जी के)	5/-, 10/-, 15/-, 20/-, 25/-, 30/-
गुरु गोरक्षनाथजी एवं बाबा मस्तनाथजी के फोटो युक्त चाबी छल्ले एवं लॉकेट	10/-, 15/-, 20/-, 30/-
(नादि पवित्री, चन्दन लकड़ी, शीशे, पीतल, तांबे, प्लास्टिक इत्यादि)	10/-, 20/-, 25/-, 40/-, 60/-
कुण्डल शीशा तथा रंगीन प्लास्टिक में छोटे, बड़े	25/-, 30/-, 40/-
कुण्डल तारा मण्डल, चाइनीज बिलौरी पत्थर के	1500/-, 1800/-
आदि धातुओं में तथा रुद्राक्ष माला, कड़े इत्यादि	200/-, 500/-, 800/-, 1000/-
शंख (दक्षिण मुखी) प्रिन्टेड गोरक्षनाथ जी के चित्र	250/-
कौड़ी के ऊपर प्रिन्टेड गुरु गोरक्षनाथ जी के चित्र	50/-

मूर्तियाँ (धातु में)

नाम	साईज	वजन	मूल्य पीतल	मूल्य ब्रास (पीतल की पालिश)
1. गुरु गोरक्षनाथजी पद्मासन में बैठी (मृगस्थली)	9 "	2 Kg	1100/-	800/-
2. गुरु गोरक्षनाथजी पद्मासन में बैठी (मृगस्थली)	6 "	1 Kg.	800/-	700/-
3 आगे आगे गोरख जागे गोरक्षनाथ चलते हुये (खड़ी)	10 "	1.300gm.	1100/-	800/-
4. आगे आगे गोरख जागे गोरक्षनाथ चलते हुये (खड़ी)	6 "	600gm.	500/-	
5. बाबा मस्तनाथजी (बैठी) पद्मासन में	9 "	2 Kg.	1100/-	800/-
6. बाबा मस्तनाथजी (बैठी) पद्मासन में	6 "	1 Kg.	800/-	700/-

शीशे के फ्रेम, मन्दिर

विवरण	मूल्य
गुरु गोरक्षनाथ तथा बाबा मस्तनाथ जी के फोटो शीशा फ्रेम (3×2 इंच, 5×3.5 इंच, 7×5 इंच)	25/-, 50/-
गुरु गोरक्षनाथ एवं बाबा मस्तनाथ जी के शीशा मन्दिर (बिजली) लाइट वाले	100/-, 200/-, 250/-, 500/-
गुरु गोरक्षनाथ एवं बाबा मस्तनाथ जी के फोटो शीशा फ्रेम (गाड़ियों में बैटरी चालित, लाईट वाले)	150/-

(मूल्य सूची में समयानुसार परिवर्तन सम्भव है।)

नोट - मूल्य + पार्सल खर्च मनीऑर्डर या संस्था के नाम D. D.भेजने पर साहित्य पोस्ट द्वारा V.P. L., V.P.P. से भेजा जायेगा। अधिक मात्रा (थोक) में साहित्य का आर्डर भेजने पर छूट प्राप्त करें।

पश्चिम

दक्षिण

उत्तर

पूर्व

पावन तीर्थ नगरी हरिद्वार में आने वाले भक्तजनों

हरिद्वार में हरकी पैड़ी के निकट श्री गुरु गोरक्षनाथ मन्दिर में योगाचार्य गुरु गोरक्षनाथ जी के शिष्य भर्तृहरिनाथ जी की प्राचीन गुफा के दर्शन कर पुण्य के भागी बनें। इसी गुफा में 2500 वर्ष पूर्व भर्तृहरिनाथ जी ने नीति, वैराग्य एवं श्रृंगार की रचना की थी।

श्री गुरु गोरक्षनाथ मन्दिर तथा श्री भर्तृहरि जी की प्राचीन गुफा

राजा भर्तृहरि नीति, वैराग्य, श्रृंगार तीनों के रचियता थे। श्री योगाचार्य गुरु गोरक्षनाथ जी महाराज के शिष्य हुए। उज्जैन-मालवा राजधानी छोड़कर श्री गंगा भागीरथी के तट पर हरिद्वार में श्री गोरक्षनाथ मन्दिर में गुफा का निर्माण करके यहां तपस्या की थी। उस समय से यह गुफा व मन्दिर यहां विद्यमान है। राजा विक्रमादित्य ने भर्तृहरि के नाम से हरकी पैड़ी का निर्माण किया था।

नोट : हरिद्वार में तीर्थ यात्रा पर आने वाले भक्तजन इस प्राचीन गुफा के दर्शन करके पुण्य लाभ प्राप्त करें।

पुस्तक प्राप्ति स्थान-अखिल भारतवर्षीय अवधूत भेष बारह पंथ योगी महासभा, गुरु गोरक्षनाथ मन्दिर (अखाड़ा) अपर रोड, हरिद्वार
श्री बाबा मस्तनाथ मठ, मठ अस्थल बोहर, जिला रोहतक, हरियाणा
मुद्रक-शिव शक्ति प्रिन्टर्स, पालीवाल धर्मशाला, अपर रोड, हरिद्वार। फोन : 01334-228796